Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि दयानन्द

गुरुदत्त

.9143
UR-M
7961

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

167961
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि दयानन्द

पिछले एक सहस्र वर्षों में स्वामी दयानन्द एकमात्र व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने यह घोषणा की कि वेदों में मूल रूप में सम्पूर्ण ज्ञान भरा हुआ है। यह परमात्मा की मनुष्य को देन है। उनकी इस घोषणा का ही परिणाम है कि न केवल हिन्दू समाज, प्रत्युत विश्वभर में विद्वानों का ध्यान वेदों की ओर होने लगा है।

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोर माला के अन्य पुष्प

महर्षि दयानन्द
जगत की रचना
(भारतीय दृष्टिकोण से)
द्वितीय विश्व युद्ध
(हिटलर की कहानी)
बोध कथाएँ

इस माला के अन्तर्गत किशोरों के लिए न केवल रोचक और आकर्षक पुस्तकें प्रकाशित करना प्रत्युत प्रेरणाप्रद एवं उपयोगी साहित्य प्रस्तुत करना यही हमारा उद्देश्य है।

हिन्दी साहित्य सदन
करोल बाग, नई दिल्ली-110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुदत्त

महर्षि दयानन्द

Central Library
167961
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

081
167961

Central Library
167961
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

हिन्दी साहित्य सदन
करोल बाग , नई दिल्ली-110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

© ईशान दत्त

R
089·9143
GUR-M

मूल्य : ₹ 40.00

प्रकाशक : **हिन्दी साहित्य सदन**
2 बी. डी. चैम्बर्स, 10/54 देशबन्धु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली–110005
फोन : 23553624, 23551344; 9213527666
email : indiabooks@rediffmail.com
hindisahityasadan@gmail.com
website : hindisahityasadan.com

संस्करण : **2017**

मुद्रक : नवशक्ति प्रिंटर्स, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम अध्याय

: १ :

अहमदाबाद के समीप सिद्धपुर ग्राम में कार्तिक-पूर्णिमा का मेला लगा था। सहस्रों नर-नारी इस तीर्थ-स्थान पर साधु, सन्त-महात्माओं के दर्शनों के लिये आये हुए थे। स्थान-स्थान पर साधुओं के अखाड़े लगे थे। कहीं-कहीं कथा-कीर्तन भी हो रहा था। एक ओर बाज़ार लगा हुआ था। वहाँ यात्री खाने-पीने के लिये मिष्ठान्न, पूरी, साग इत्यादि खरीदते थे।

इस मेले में, एक दिन प्रातः चार बजे से कुछ पहले, एक खेमे में एक रईस और उसके साथ कई सिपाही, घबराये हुए एक-दूसरे को देख रहे थे। एक सेवक दूसरों को जगा-जगाकर पूछ रहा था, "तुमने देखा है भैया को ?"

"नहीं, तुम्हारे पास ही तो सो रहे थे।"

"मुझको झपकी आ गई थी ?"

"तो कहाँ जा सकते हैं ?"

"यहाँ लोटा रखा था। अब नहीं है।"

"शौच के लिये गये होंगे।"

रईस क्रोध में कहने लगा, "तुम सब गधे हो। जल्दी उठो और बाहर मेले में जाकर देखो।"

मेले के लोग रात देर तक कथा-कीर्तन करने के कारण सो रहे थे। पूर्ण स्थान पर शांति विराजमान थी। कहीं-कहीं कोई वैरागी अपनी गूदड़ी में लेटा-लेटा बोल उठता—"हर हर महादेव।"

रईस के सिपाही इधर-उधर भागते हुए सोये पड़े हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कुलघातक, मातृहन्ता तुम बहुत बिगड़ गये हो।' इस प्रकार
करशनजी मूलशंकर को डाँटने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमियों में भैया को ढूंढ रहे थे।

रईस, टंकारा के फौजदार एवं जमादार पण्डित कर्शन जी थे। उनका ज्येष्ठ पुत्र मूलशंकर घर से भाग गया था। पिता उसकी, सिद्धपुर के कार्तिक पूर्णिमा के मेले में टोह पा, उसको ढूंढता हुआ वहाँ आ पहुँचा था। मेला कई दिन तक चलना था। लोग आते थे, स्नान-ध्यान और कथा कीर्तन कर लौट जाते थे। नित्य सहस्रों नये लोग आ जाते थे और सहस्रों नित्य चले जाते थे।

मूलशंकर मेले में किसी ऐसे साधु-महात्मा की खोज में आया था, जो योगाभ्यास जानता हो और उसमें उसको शिक्षा दे सके। उसे घर से आये कई महीने हो चुके थे कि एक दिन सायंकाल उसके पिता अपने सिपाहियों के साथ उसको ढूंढते हुए वहाँ आ पहुँचे।

पिता पुत्र को, ब्रह्मचारियों के से पीत एवं लाल वस्त्रों में देख क्रोध से भर गया और उसके वस्त्रों को फाड़ते हुए उसे फटकार बताने लगा। उसको सामान्य जन के समान वस्त्र पहना दिये गए। बालक चुपचाप यह सब सहन करता रहा। पिता ने क्रोध में उसे कहना शुरू किया, "कुलघातक! मातृ-हन्ता! तुम बहुत बिगड़ गये हो। बताओ, क्यों भाग आये थे घर से?"

मूलशंकर ने नम्रता और क्षमा-याचना के भाव में कह दिया, "पिताजी! भूल हो गई है। किसी ने बरगला दिया था।"

"तो अब घर लौट चलोगे न?"

"जी।"

कर्शन जी ने मूलशंकर को साथ लिया और अपने खेमे में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपाहियों के पहरे में रख दिया। रात होने पर मूलशंकर लेट गया और सोने का बहाना करता रहा। सिपाही रात बहुत देर तक पहरा देते रहे। प्रातः तीन बजे के लगभग सब पहरेदार सो गये तो मूलशंकर चुपके से उठा और समीप रखे लोटे को उठाकर शौच करने के बहाने वहाँ से चल पड़ा। कुछ दूर तक तो वह बैठ-बैठकर गया और जब खेमे से ओझल हुआ तो भाग खड़ा हुआ। तीन मील के अन्तर पर एक मंदिर था। मंदिर के किनारे, एक घने पेड़ की, डालियाँ, मंदिर की गुंबद पर छायी हुई थीं। उसने देखा कि यह स्थान छिपने के लिये अच्छा है। वह पेड़ पर चढ़ गया और गुंबद का आश्रय ले पेड़ के पत्तों में छिपकर बैठ गया।

दिन-भर वह उस पेड़ पर छिपकर बैठा रहा। एक समय तो उसका अपना पिता और गाँव के सिपाही उस मंदिर के समीप ढूँढते हुए दिखाई दिये। किसी को यह नहीं सूझा कि मूलशंकर बन्दर की भाँति पेड़ की डाली के पत्तों में छिपा बैठा होगा।

रात होने पर मूलशंकर पेड़ से उतरा और अहमदाबाद की ओर चल पड़ा।

: २ :

मूलशंकर टंकारा के जमादार तथा मौरवी राज्य के तहसीलदार का बड़ा लड़का था। उसका जन्म संवत् १८८१ में हुआ था। उसके दो छोटे भाई भी थे, परन्तु दोनों का देहान्त हो चुका था।

पिता अपने ज्येष्ठ पुत्र का विवाह शीघ्र करना चाहता था। परन्तु मूलशंकर की इच्छा काशी जाकर विद्याध्ययन करने की थी। इस कारण वह विवाह करना अस्वीकार कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था। मूलशंकर की माँ अपने पुत्र को घर से इतनी दूर जाकर पढ़ने की स्वीकृति नहीं दे सकी। मूलशंकर के चाचा ही उसको घर पर पढ़ाने लगे। जो कुछ घर पर पढ़ाया जा सकता था, वह चौदह वर्ष की आयु तक उसने सब पढ़ लिया। व्याकरण, शब्द-रूपावली और प्रारम्भिक आयुर्वेद, उसने सब कंठस्थ कर लिया था।

परन्तु मूलशंकर को इससे संतोष नहीं हुआ। वह और अधिक पढ़ने का हठ करने लगा। इस समय उसके विवाह की तैयारी होने लगी। मूलशंकर ने घर से भाग जाने की धमकी दे दी। इससे विवाह तो स्थगित हो गया, परन्तु उसको काशी भेजने का साहस किसी को नहीं हुआ।

इस पर भी वह घर पर रुक नहीं सका। घर से भागने में विद्याध्ययन के अतिरिक्त एक अन्य कारण भी था। उसके मन में तत्कालीन धर्म-कर्म की मान्यता पर संदेह उत्पन्न हो गया था। अभी वह तेरह-चौदह वर्ष की आयु का ही था कि उसके मन में धार्मिक विश्वासों पर भारी संदेह उत्पन्न करने वाली एक घटना घटी। शिवरात्रि की रात थी और पूर्ण परिवार शिवरात्रि का व्रत रखे हुए था। इस व्रत में चौबीस घण्टे तक निराहार रहने और चार बार शिवजी की पूजा का विधान है। रात्रि को जागरण करना भी आवश्यक माना जाता है।

पूरा परिवार और गाँव के अन्य लोग गाँव के कुछ अन्तर पर एक शिवालय में पूजन के लिये गये हुए थे। सायंकाल का पूजन करने के उपरांत लोग ध्यानावस्थित बैठे-बैठे ऊँघने लगे और एक-एक कर उठकर मन्दिर के बाहर जा आराम करने लगे। मूलशंकर के मन में यह संस्कार था कि सो जाने से व्रत भंग हो जावेगा और व्रत भंग करने से पाप लगेगा। इस कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अभी त्रिशूलधारी शंकर अपना पाशुपतास्त्र चलाकर इस चूहे को इसकी धृष्टता का दण्ड देंगे।' मूलशंकर ने सोचा परन्तु इस प्रकार के कोई लक्षण दिखाई नहीं दिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरों को ऊँघते और बाहर जा सोते देखकर भी वह यत्नपूर्वक जागता रहा । गीला कपड़ा आँखों को लगा-लगाकर वह अपनी नींद हटाता रहा ।

रात के दो बज चुके थे । पूजा के लिये आये हुए सभी लोग गहरी नींद सो रहे थे । उसके पिता पंडित कर्शनजी भी सो गये थे । केवल वही बैंठा शिव के पूजन में ध्यान लगाने का यत्न करने लगा था । इस समय मंदिर में कहीं से एक चूहा आया और मूर्ति पर चढ़े चावल एवं मिष्ठान्न खाने लगा । मूलशंकर के मन में विचार आया कि अभी त्रिशूलधारी शंकर अपना पाशुपतास्त्र चलाकर इस क्षुद्र चूहे को उसकी धृष्टता का दण्ड देंगे । परन्तु बहुत समय व्यतीत हो जाने पर भी इस प्रकार के कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़े । चूहा आनन्द से मिठाई इत्यादि का भोग लगाता रहा । मूलशंकर के मन में भाँति-भाँति के विचार उठने लगे । वह विचार करता था कि अभी कुछ समय पूर्व ही कथा में शिवजी को प्रचंड पाशुपतास्त्र का स्वामी, अतुल बलधारी, दुष्टों का दमन करने वाला और अमित तेज का पुंज बताया है । वह अपने ऊपर कूदते-फाँदते और पूजा की सामग्री को खाते औंर भ्रष्ट करते चूहे को भी हटा देने की सामर्थ्य नहीं रखता । अतः यह वह महादेव नहीं हो सकता ।

वह मन में विचार करता था कि यदि यह वह महादेव नहीं तो फिर इसके सामने बैठ पूजा-पाठ और भेंट इत्यादि का क्या प्रयोजन हो सकता है ? उसके बाल मन में इस संशय का समाधान नहीं हुआ तो उसने अपने पिता को जगाया और अपने मन के संशय का वर्णन कर दिया । उसका प्रश्न था, "जिस महादेव के विषय में अभी-अभी कथा में यह वर्णन हुआ था कि वे अतुल बलधारी, महापराक्रमी हैं, वे अपने ऊपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से एक चूहे को क्यों नहीं हटा सके ?"

पिता या तो इस प्रश्न का उत्तर जानता नहीं था, या उस समय वह नींद में होने के कारण पुत्र से बातचीत करना नहीं चाहता था। उसने पुत्र को डाँट दिया और पुनः सो गया। किन्तु जिज्ञासु का मन शान्त नहीं हुआ। कुछ देर तक वह वहाँ बैठा रहा। तदनन्तर मन में यह निश्चय कर कि यह मूर्ति महादेव शिव नहीं है, फिर क्या लाभ यहाँ बैठने का, वह घर चला आया। घर पर माँ को रात में ही पुत्र के वापस आ जाने पर आश्चर्य हुआ और उसने लौट आने का कारण पूछा तो मूलशंकर ने माँ के सामने पूर्ण घटना का वर्णन कर अपना संशय बता दिया। माँ बेचारी उत्तर नहीं दे सकी। तत्कालीन हिन्दू समाज की अवस्था का यह एक अत्यन्त भद्दा चित्र था। ऐसा प्रतीत होता है कि समाज में प्रायः घटक कर्मकांड में केवल निष्ठा के बल पर ही आरूढ़ थे। निष्ठा में आधार वह जानते नहीं थे। जाति के विद्वान लोगों ने सर्वसाधारण के मन में यह धारणा बैठा रखी थी कि विश्वास ही उद्धार का मूल मंत्र है, बुद्धि का प्रयोग धर्म-कर्म के विषय में पथ-भ्रष्ट करने वाला होता है। एक बुद्धिशील व्यक्ति के लिए यह स्थिति असह्य थी।

माँ ने भी मूलशंकर को जाकर सो रहने के लिए कह दिया। मूलशंकर को बीस घण्टे के उपवास से भूख लग रही थी और व्रत, जागरण, पूजा, कीर्तन सब पर उसे संशय हो उठा था। उसने चित्त की अवस्था का वर्णन किया तो माँ ने उसको खाने के लिए मिठाई दी और व्रत भंग करने की बात अपने पिता से न बताने के लिए कह दिया। माँ अपने पति के क्रोध की बात को जानती थी और पुत्र की ममता से प्रेरित उसने उसे क्रोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बचने का उपाय बताया।

मूलशंकर के मन में यह बात बैठ गई कि शिव, जिसका पूजन किया जा रहा था, वास्तविक शिव नहीं है और पुनः व्रत रखने का तथा शिवालय में स्थापित मूर्ति पूजन करने को उसका चित्त नहीं किया।

महात्माओं का यह लक्षण होता है कि वे न तो अपने से और न दूसरों से ही, वंचना कर सकते हैं। वे जैसा विचार करते हैं वैसा ही करते हैं और जो कुछ विचार करके निर्णय करते हैं, वैसा ही वे आचरण करते हैं। अतः मूलशंकर के मन में मूर्ति-पूजा से अरुचि का बीज पड़ गया और उसमें वास्तविक महादेव, परमात्मा, पूर्ण जगत का कर्त्ता, के विषय में जानने की उग्र उत्कंठा उत्पन्न हो गई।

: ३ :

यदि केवल अध्ययन करने की लालसा होती और केवल परमात्मा को जानने की ही जिज्ञासा होती, तब भी घर से भाग कर जाने की आवश्यकता न पड़ती। घर-गृहस्थी में रहते हुए भी इन जिज्ञासाओं की पूर्ति में यत्न किया जा सकता था। परन्तु मूलशंकर के मन में एक अन्य जिज्ञासा उत्पन्न हो गई थी।

वह अभी सत्रह-अठारह वर्ष का था कि उसकी छोटी बहन का विशूचिका से प्राणान्त हो गया। बहिन की मृत्यु के समय वह उसके सम्मुख उपस्थित था। कदाचित् उसने मृत्यु के समय बहन के कष्ट को देखा होगा। वह उसके तड़फड़ाने को देखकर स्वयं दुःखी हुआ होगा।

बाद में अपने स्वरचित जीवन-चरित्र में स्वामीजी लिखते हैं—"उस भगिनी के वियोग का शोक मेरे जीवन का प्रथम शोक था। उस शोक से हृदय में बड़ा आघात लगा। जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिवार के लोग मेरे चारों ओर खड़े क्रंदन-विलाप कर रहे थे मैं पत्थर की मूर्ति के समान अविचलित चिंता में डूबा हुआ था। मनुष्य की क्षण-भंगुरता की बात सोचकर अपने मन में कह रहा था कि जब पृथ्वी पर सबको ही इस प्रकार मरना है तो मैं भी एक दिन मरूँगा। कोई ऐसा स्थान भी है या नहीं, जहाँ जाकर मृत्यु-समय की यंत्रणा से रक्षा हो सके तथा मुक्ति का उपाय मिल सके।

बहन की मृत्यु के समय मूलशंकर के मन में यह संकल्प बना कि वह मृत्यु से बचने का उपाय ढूंढेगा। इसके कुछ दिन बाद ही उसके चाचा की भी मृत्यु हो गई। मूलशंकर का चाचा से बहुत स्नेह था। वह उसका गुरु और विश्वासपात्र था। चाचा-भतीजा अपने मन की बातें परस्पर किया करते थे।

घर में ये दो मौतें मूलशंकर के मन में इसको जीतने की अभिलाषा उत्पन्न करने वाली घटनायें थीं। पूछगीछ से और जितना कुछ पढ़ा था उससे उसको यह विदित था कि मृत्यु जीतने की विद्या योगाभ्यास है और योगाभ्यास घर में रहकर नहीं हो सकता। अतः चाचा की मृत्यु के बाद मूलशंकर ने यह दृढ़ संकल्प कर लिया कि वह योग सीखने के लिए घर से चला जावेगा।

अभी वह २१ वर्ष की आयु का ही हुआ होगा कि उसके विवाह की तैयारी की जाने लगी। यह संवत् १९०३ था और उसके विवाह को एक मास रह गया था। एक दिन किसी योगी की खोज में वह घर से निकल पड़ा।

टंकारा से चलकर वह रायपुर और रायपुर से शैला की ओर चल पड़ा। यहाँ एक लाला भक्त रहता था। मूलशंकर ने सुना था कि लाला योगाभ्यास का ज्ञाता है। वह कुछ दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके पास रहा और योग की कुछ क्रियायें भी उसने उससे सीखीं, परन्तु उसकी सन्तुष्टि नहीं हुई।

शैला में मूलशंकर का परिचय एक ब्रह्मचारी से हो गया और उससे ब्रह्मचर्य की दीक्षा ले मूलशंकर ने अपना नाम शुद्ध चैतन्य रख लिया। शैला से वह कोट कंगारा को चला गया। यहाँ साधु-सन्त वैरागियों से भेंट हुई, परन्तु किसी से योग और सिद्धि प्राप्त न होने से वह ब्रह्मचारी सिद्धपुर चल पड़ा। सिद्धिपुर में कार्तिक का मेला लगता था और इस मेले में बहुत साधु-सन्त महात्मा आया करते थे।

सिद्धपुर के मार्ग में ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य को टंकारा का एक व्यक्ति मिल गया और उसने उसे पहचान लिया। उस व्यक्ति को यह भी पता चल गया कि मूलशंकर सिद्धपुर जा रहा है। अतः उसके पिता को समाचार दे दिया गया और तदनुसार उसके पिता उसको पकड़ने के लिए आ गये। मूलशंकर के ब्रह्मचारियों के वस्त्र फाड़, कर्शन जी ने समझा कि उन्होंने शुद्ध-चैतन्य को पुनः मूलशंकर में परिणत कर दिया है। वास्तव में मूलशंकर के मन में उत्कट इच्छा जागृत हो चुकी थी कि वह मृत्यु को जीतने के लिए योग सीखेगा। अतएव अवसर पाते ही वह उस मेले से पुनः भाग कर चल दिया।

दिन-भर कर्शन जी तथा उनके सिपाही मूलशंकर को ढूंढते रहे और मूलशंकर मंदिर के गुंबद पर पेड़ के पत्तों में छिपा बैठा रहा। अँधेरा होने पर पेड़ से उतर, उसने चुपचाप अहमदाबाद का रास्ता लिया। अहमदाबाद से बड़ौदा पहुँचा। बड़ौदा में वह चेतन मठ के ब्रह्मचारियों और संन्यासियों की संगति में रहने लगा और उनसे वेदान्त की शिक्षा प्राप्त करने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचारी शुद्धचैतन्य अब स्वयं को ब्रह्म मानने लगा। इस पर भी मृत्यु-विजय की खोज में वह वहाँ से चणोद, कर्णाली की ओर चल पड़ा। उसको सूचना मिली थी कि वहाँ बहुत साधु-सन्त आते-जाते रहते हैं, उनमें से वह किसी योगी को खोज में ही वहाँ गया था।

चणोद-कर्णाली दो स्थान हैं। दोनों नर्मदा नदी के तट पर स्थित हैं। नर्मदा भारत की परम-पावनी नदियों में से एक है। इसकी महिमा गंगा जितनी तो नहीं, इस पर भी बहुत भारी है। वहाँ महात्मा लोगों का वास है।

स्वामी दयानन्द ने स्वरचित जीवन-चरित्र में इस स्थान का वर्णन इस प्रकार किया है।

"वहाँ मैंने कई ब्रह्मचारियों, चिदानंद प्रभृति संन्यासियों और कई योग-दीक्षित साधु-महात्माओं के दर्शन किये। इससे पहले योग-दीक्षित साधुओं को मैंने कभी नहीं देखा था। कई दिन के शास्त्रालाप के बाद एक दिन मैं परमात्मा परमहंस के पास गया और उनसे शिक्षा देने की प्रार्थना की। कुछ मास में ही मैंने वेदान्त-सार और वेदान्त परिभाषा के ग्रन्थों को पढ़ डाला।"

: ४ :

कर्णाली में ब्रह्मचारी शुद्धचैतन्य ने संन्यासी की दीक्षा ली। उसका नाम दयानंद सरस्वती हो गया। कालान्तर में यही दयानंद महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती के नाम से विख्यात हुए। संन्यास की दीक्षा देने वाले एक दक्षिणी संन्यासी स्वामी चिदाश्रम सरस्वती थे। ये योग-दीक्षित साधु थे और स्वामी दयानंद ने इनसे बहुत-सी योग-क्रियायें सीखीं।

स्वामी दयानंद के संन्यास ज़ीवन का प्रथम भाग चणोद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से आरम्भ होता है। इसमें वे किसी ऐसे योगी की खोज में भ्रमण करते रहे, जो उनको मृत्यु को जीतने का उपाय बता सके। इस खोज से वे आबूगिरि, हरिद्वार, ऋषिकेश, टिहरी, श्रीनगर, केदारनाथ, रुद्र प्रयाग, अगस्त्य आश्रम, शिवपुरी, गुप्त काशी, गौरी कुण्ड, भीम गुफा, त्रिपुणी नारायण, केदारनाथ इत्यादि स्थानों पर गये। संवत् १९११ तथा १९१२ के दो वर्ष वह उत्तराखण्ड में किसी सिद्ध योगी की खोज में घूमते रहे। परन्तु दो वर्ष के बाद वे निराश ही लौटे।

इन दिनों की एक घटना का वर्णन स्वामी दयानंद इस प्रकार करते हैं—

"एक दिन सूर्य निकलते ही मैं बद्रीनाथ मन्दिर से निकला और पर्वत के नीचे-नीचे चलने लगा। अन्त में अलखनंदा के तट पर जा पहुँचा। नदी के पार बड़ामाना ग्राम दिखाई दिया। उस पार मेरी जाने की इच्छा नहीं थी। पहाड़ के नीचे-नीचे जाता हुआ मार्ग, मैंने पकड़ लिया। मैं अलखनन्दा के साथ-साथ चलता गया। पर्वत और मार्ग मोटे बर्फ से ढके हुए थे। अन्त में अलखनन्दा के प्रसिद्ध उतपत्ति स्थान पर मैं पहुँचा। वहाँ पर मैंने देखा कि चारों ओर गगनभेदी पर्वत माला खड़ी है। वह स्थान मेरे लिए सर्वथा अपरिचित था। साथ ही चारों ओर से पर्वतों से घिरा हुआ भी।...कुछ देर तो मैं इधर-उधर घूमता रहा। फिर नदी के दूसरी ओर जाकर मार्ग ढूंढने का विचार कर मैं नदी में घुस गया। उस समय मैं साधारण पतला कपड़ा पहनें हुए था। मुझे भूख और प्यास भी लग रही थी। उससे चित्त क्लान्त था। जल बर्फ के समान ठंडा था। कहीं गहरा था और कहीं बहुत कम था। जहाँ थोड़ा था वहाँ भी एक हाथ से कम नहीं था। बर्फीले किनारों के बीच में यह दस हाथ

—२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौड़ी नदी होगी। नदी तल पर बर्फ और पत्थर के टुकड़ों से पाँव क्षत-विक्षत हो रहे थे। रक्त बहने लगा और मेरे पाँव सन्न हो गए थे। ऐसा अनुभव होने लगा कि एक बार जल में गिरा तो फिर उठ नहीं सकूँगा और बर्फ में जमकर प्राणान्त हो जावेगा।...मुझमें चलने की शक्ति नहीं थी। जीवन से निराश-सा हो रहा था। तब वहाँ दो मनुष्य आते दिखाई दिये, वे मेरी अवस्था देख और मेरे भ्रमण का कारण जानकर मुझे अपने घर तक चलने के लिए कहने लगे। उन्होंने मुझे वचन दिया कि वे मुझे सिद्धपुर तीर्थ तक पहुँचा देंगे। परन्तु मुझमें चलने की हिम्मत नहीं थी। अतः मैंने उनके साथ चलने की असमर्थता प्रकट की। इस पर वे मुझे वहीं छोड़कर चल दिये।

'उनके जाने के बाद मरने से बचने की उत्कट अभिलाषा उत्पन्न हुई। मैं उठा और पुनः नदी पार कर जिस मार्ग से आया था लौटने लगा। रात्रि के आठ बजे मैं पुनः बद्रीनारायण के मन्दिर में आ गया।

"बद्रीनारायण मन्दिर के रावल जी मेरे न लौटने से अति चिन्तित थे। इस घटना से मेरे उत्तरांचल में योगी-जनों की खोज समाप्त हुई।"

द्रोण सागर में रहते हुए योगियों की खोज में निराश स्वामी दयानंद एक बार बर्फ पर जाकर शरीर त्याग देने की बात भी सोचने लगे थे। परन्तु फिर विचारशील प्राणी की भाँति शेष जीवन-भर ज्ञान प्राप्त करने में व्यतीत करने का उन्होंने निश्चय कर लिया।

स्वामी जी ने इस भ्रमण का उद्देश्य योगी-जनों की खोज ही लिखा है। परन्तु इसके बाद योगी-जनों की खोज उन्होंने छोड़ दी और वे ज्ञान उपलब्धि के लिए भ्रमण करने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी जी को विश्वास हो गया था कि योग से मृत्यु पर विजय नहीं प्राप्त हो सकती। मृत्यु तो होगी ही, परन्तु मृत्यु के दुःख से निवृत्ति ज्ञान द्वारा होगी। अतः सम्वत् १९१३ से उनका भ्रमण किसी ज्ञानी पुरुष की खोज में प्रारम्भ हुआ।

: ५ :

उत्तराखण्ड की यात्रा के उपरान्त स्वामी दयानन्द के संन्यास आश्रम का दूसरा भाग आरम्भ होता है। उत्तराखण्ड को छोड़ वे गंगा के किनारे-किनारे काशी तक गये। उन्होंने योग की पुस्तकों को व्यर्थ समझ फेंक दिया।

स्वामीजी में एक बात विशेष थी। वे निश्चयात्मक बुद्धि रखते थे। जिस भी बात को वे व्यर्थ समझ जाते थे, उसको छोड़ देते थे। उनका, अपनी पूर्व की बातों से कभी भी मोह नहीं हुआ था।

अपने भ्रमणों में स्वामीजी ने भारत में फैली अज्ञानता और मूर्खता का व्यापक दर्शन किया। अनेक रोचक घटनाओं का उल्लेख स्वामीजी ने अपनी जीवन-कथा में लिखा है।

वे एक गाँव के अन्दर एक शिव-मन्दिर में रात बिताने के लिये गए तो मन्दिर के द्वार पर एक बहुत बड़े पत्थर की नन्दी की मूर्ति देख, उसके पास ही स्थान को झाड़-फूंक कर वे सोने लगे। इनको नन्दी के पेट में कुछ हलचल सुनाई दी। ये सतर्क हुए तो नन्दी की प्रतिमूर्ति के भीतर से एक आदमी निकला और अपने सामने एक दण्डीधारी हृष्ट-पुष्ट साधु को खड़ा देख एक ओर को भाग गया। जाते समय वह नन्दी के पेट में जाने वाला द्वार बन्द करना भूल गया। स्वामी जी ने देखा कि नन्दी के पेट में सोने के लिये बहुत सुन्दर स्थान बना हुआ है। वे उसमें घुस, द्वार बन्द कर सो गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन चढ़ने पर एक बुढ़िया मन्दिर की पूजा के लिये गुड़-दही लेकर आई और वृषभ देवता नन्दी को भोग लगाने लगी। स्वामीजी की नींद खुल गई थी और नन्दी के मुख से गुड़-दही भीतर आते देखा तो वे आनन्दपूर्वक उसका भोग लगाने लगे।

एक बार वे नर्मदा के स्रोत को देखने के लिये जा रहे थे। मार्ग में एक रीछ से युद्ध होते-होते बचा। बीहड़ जंगल में एक सिंह से भी सामना हुआ। स्वामी जी लाठी लिये चुपचाप खड़े रहे और सिंह मुख मोड़कर चल दिया।

इस भ्रमण की कथा भी स्वामीजी ने अपने जीवन-चरित्र में लिखी है। यह जीवन-कथा सम्वत् १९१४ के पूर्व काल तक लिखी गई है। इसके उपरान्त सम्वत् १९१४ से सम्वत् १९१७ तक के स्वामी जी के जीवन का कुछ भी पता नहीं चलता। स्वामी जी अपने इस काल के जीवन के विषय में सर्वथा मौन रहे। उनका जीवन-चरित्र लिखने वाले भी इन तीन वर्षों का वृत्तान्त नहीं जान सके।

जीवन-चरित्र लिखने वालों में कुछ का विचार है कि स्वामी-जी, इन तीन वर्षों में, तत्कालीन स्वाधीनता के संग्राम में किसी-न-किसी प्रकार सहायक रहे हैं। यह काल था जब सम्वत् १९१४-१५ (सन् १८५७) का ब्रिटिश सरकार के विपरीत विद्रोह उग्र रूप में हो रहा था। उन दिनों स्वामी जी नर्मदा के तटवर्ती गाँवों और कानपुर-झाँसी के बीच के क्षेत्र में थे। यही क्षेत्र था, जहाँ विद्रोह उग्र रूप में था। यह भी प्रमाणित है कि इस विद्रोह में बहुत से साधु विद्रोह की आग गाँव-गाँव में लगाते फिरते थे। स्वामीजी के जीवन की पीछे की कथा से स्पष्ट है कि वे देश की पराधीनता से बहुत दुःखी रहते थे। वे शुद्ध राष्ट्रीय विचार रखने वाले थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Central Library 167961 Gurukul Kangri University Haridwar

इससे पूर्व के जीवन में वे राजनीति से अछूते ही थे। इससे इस सम्भावना को बल मिलता है कि इन तीन वर्षों में वे किसी-न-किसी प्रकार से इस राष्ट्रीय हलचल के सम्पर्क में आये थे। इस स्वतन्त्रता के संग्राम के विफल होने के उपरान्त सरकार की ओर से विद्रोहियों के विरुद्ध घोर दमन-चक्र चल रहा था। सम्भव है कि इसी कारण स्वामी जी ने अपने इन वर्षों के जीवन को गुप्त रखा हो।

कुछ भी हो। सम्वत् १९१४ से १९१७ तक के स्वामीजी के जीवन का वृत्तान्त नहीं मिलता। सम्वत् १९१७ में स्वामी जी मथुरा में प्रकट हुए।

R 089.9143 GUR-M

: ६ :

इस काल की भारतवर्ष की और हिन्दू समाज की अवस्था जान ली जाय तो स्वामी दयानन्द के शेष जीवन को समझने में सहायता मिलेगी। स्वामी दयानन्द के जीवन एवं कार्य की विशेषता का ज्ञान इस अवस्था के ज्ञान से ही हो सकता है।

भारतवर्ष के विषय में हिन्दू धारणा यह है कि यहाँ देवताओं का निवास था। यहाँ पर तैंतीस करोड़ देवता रहते थे। देवता का अभिप्राय स्वर्ग के निवासी तथा न नष्ट होने वाले हाड़-माँस के शरीर वाले व्यक्ति से नहीं समझना चाहिये। देवताओं से अभिप्राय भूतल पर रहने वाले प्राणियों से ही है। सुदृढ़ शारीरिक डील-डौल, मानसिक प्रतिभा और आत्मबल से युक्त लगभग तैंतीस करोड़ मनुष्य भारतवर्ष नाम की भूमि में रहते थे। वे दिव्यगुणों से युक्त होने के कारण देवता कहाते थे।

यहाँ की सभ्यता तथा संस्कृति और धर्म अति प्राचीन तथा श्रेष्ठ था। भारतीय प्राचीन सभ्यता वैदिक सभ्यता के नाम से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विख्यात है। इसमें मनुष्य को प्रथम पच्चीस वर्ष तक कठोर ब्रह्मचर्य, फिर पच्चीस वर्ष तक गृहस्थ-जीवन में समाज का प्रत्येक प्रकार का बोझा सहन करते हुए कर्त्तव्य पालन करने का आदेश है। तदनन्तर घर छोड़ वानप्रस्थ आश्रम में स्वाध्याय और तपस्या तथा जीवन के अन्तिम वर्षों में परिव्राजक बनकर भ्रमण करते हुए धर्मोपदेश एवं धर्म-कर्म करे, यह विधान था। इस प्रकार की जीवन-चर्या में भोग-विलास न्यूनातिन्यून मात्रा में था।

सौ वर्ष के जीवन में केवल पच्चीस वर्ष गृहस्थ के सुख-आनन्द के और उसमें भी आय का अधिकांश समाज-सेवा में व्यय करने का आदेश है। ब्रह्मचारियों के जीवन-यापन तथा शिक्षा का प्रबन्ध गृहस्थियों को करना होता था। गृहस्थाश्रम में भी निर्धन, अपाहिज तथा भाग्यहीनों की रक्षा व पालन-पोषण करना होता था। इन्हीं गृहस्थियों पर समाज के क्षत्रिय और ब्राह्मण वर्ग का बोझा भी था। गृहस्थी राजा को कर देते थे, जिससे राजा सेना रख, देश की बाहरी और भीतरी शत्रुओं से रक्षा करते थे। गृहस्थी ही ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देते थे, जिससे वे ज्ञान-विज्ञान और धर्म-कर्म करते थे।

यह थी संक्षेप में भारत की वैदिक समाज की रूप-रेखा। यह अति विकट और कठोर जीवन था। अतएव इस कठोरता से बच कर सुगम मार्ग ढूँढनें का यत्न हुआ। सबसे पहले बल-शालियों ने समाज की व्यवस्था भंग करने का यत्न किया। उन्होंने भले लोगों को कष्ट पहुँचाना आरम्भ किया।

भले लोगों ने दुष्टों के दमन के लिये राज्य की व्यवस्था की। इससे कुछ काल तक शान्ति रही। परन्तु शीघ्र ही राजाओं ने अपने कर्तव्य की अवहेलना आरम्भ कर दी। ब्राह्मण भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज में एक महान शक्ति थे। विद्वानों की महिमा थी और वे राजा-महाराजाओं को सन्मार्ग दिखा सकते थे। राजाओं ने ब्राह्मणों को अपने अधीन कर उनके विद्याबल को क्षीण किया। ब्राह्मणों के पतित होने से जीवन-मीमांसाएँ बदलने लगीं।

इन जीवन-मीमांसाओं में सबसे प्रथम, बादरायण का वेदान्त प्रचलित हुआ। बादरायण ने कहा—यह संसार मिथ्या है और कर्मबन्धन लाने वाला है। मोक्ष ही परम साध्य है। परिणाम यह हुआ कि श्रेष्ठ विद्वान लोग संसार से तटस्थ हो गये और मूर्ख लोग संसार की गाड़ी चलाने लगे। इसके परिणामस्वरूप वाम मार्ग की उत्पत्ति हुई। वाम मार्ग है इन्द्रिय-सुख में परम गति। वाम मार्ग की प्रतिक्रिया हुई, जैन-धर्म और बौद्ध-धर्म। बौद्धधर्म निवृत्ति मार्ग वाला है। इसके व्यापक प्रचार से अशोक प्रभृति शासक पैदा हो गये जो देश को सेना से शून्य कर विदेशियों के आक्रमण के लिये मार्ग खोल गये।

वेदान्त और बौद्धधर्म का सामूहिक परिणाम हुआ कि समाज विद्वानों से तथा वीर्य क्षत्रियों से रहित हो गया और भारत में एक महान अज्ञान का और कायरता का काल आया। कुछ सहस्र मुसलमान विदेशीय भारत में आये और कोटि-कोटि भारत की जनता को पददलित कर उनका धन-सम्पद लूटने तथा उनके स्त्री वर्ग का हरण करने लगे।

चार-पाँच सौ वर्ष की लूट-मार और अत्याचार की प्रतिक्रिया हुई। कहीं-कहीं जागृति और प्रतिकार की भावना उत्पन्न हुई। एक ओर साधु-सन्त महात्मा अपने पुराने विचार-आचार की महिमा गान करने लगे तो दूसरी ओर शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह प्रभृति राजनीति में पाँसा पलटने का यत्न करने लगे। प्रतिक्रिया ने एक सीमा तक ही समाज में परिवर्तन उत्पन्न किया। साधु-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्त महात्मा धार्मिक जागृति को उत्पन्न करने में एक सीमा तक सफल हुए। ऐसी शिक्षा दी जाने लगी कि जिससे विद्वत्ता का स्थान श्रद्धा-भक्ति को मिलने लगा। बुद्धिवाद के स्थान पर निष्ठा की कूक लगने लगी। जो भी विद्वान् हुआ या तो मायावादी वेदान्ती हुआ अथवा सोमनाथ के मन्दिर के पुजारियों जैसा वैष्णव। दूसरी ओर गुरु गोविन्दसिंह के अनुयायी मुसलमानों से राज्य छीनकर हिन्दू राज्य तो स्थापित कर सके, परन्तु एक पीढ़ी में ही राज्य-व्यवस्था न रख सकने के कारण राज्य-विहीन हो गये। शिवाजी ने भी मरहठा साम्राज्य स्थापित किया, परन्तु उनके उत्तराधिकारी परस्पर लड़-लड़कर ही पराजित हो गये।

ऐसी अवस्था में सात हज़ार मील दूर के अंग्रेज़ भारत में आ राज्यासीन हो गये। यदि एक वाक्य में देश की दुर्दशा का चित्र खींचा जाय तो वह यह है कि देश में, कहने में सब अक्ल-मंद थे, वास्तव में सब मूर्ख थे।

: ७ :

जिस समय देश में मूलशंकर का जन्म हुआ, उस समय देश, विशेष रूप में हिन्दूसमाज धार्मिक विप्लव की अवस्था में था और यहाँ राजनीतिक दृष्टि से घोर अव्यवस्था थी।

धर्म-कर्म के विषय में एक परिवार और दस देवता पूजा-विधियाँ और सामाजिक व्यवहार थे। देश में जितने लोग बसते थे, उतने नहीं तो उनसे कुछ ही कम इष्ट देवता थे। एक-एक देवता के अनेक रूप, उनके अनेक विवरण और अनेक महात्म्य थे। नास्तिकवाद से लेकर प्रातः से सायंकाल तक घड़ी-घड़ी में बदलने वाले इष्टदेवों के धर्म इस देश में प्रचलित थे।

जड़ता, रूढ़िवाद, निरर्थक क्रियाकलाप का कूड़ा-करकट मनुष्यों के व्यवहार में विराजमान था। मूलशंकर को शिवमूर्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में शिव दिखाई नहीं दिया तो यह बात किसी की समझ में ही नहीं आई कि वह किस बात पर आपत्ति करता है। यदि किसी से उसने कहा तो उसको नास्तिक कहकर डाँट दिया गया। एक कट्टर निष्ठावान हिन्दू परिवार में एक भी तो प्राणी ऐसा नहीं था जो उसका समाधान कर सकता। उसको एक विद्वान् पंडित के पास शिक्षा के लिये भेजा गया। परन्तु वह विद्वान् मूलशंकर के संशयों का निवारण नहीं कर सका। कोई व्यक्ति मूलशंकर को नहीं मिला जो उसके संशय का निवारण कर सकता।

यही अवस्था पूर्ण देश की थो। कोई मुसलमान किसी हिन्दू को छू देता था तो वह हिन्दू स्वयं को पतित हो हिन्दू धर्म से बाहर समझ लेता था। कहीं भूल से कोई किसी विधर्मी से छुआ पकवान खा गया तो उसको जीवन-भर के लिये पतित एवं विश्वासों से गिरा हुआ मान लिया जाता था। पूर्ण समाज जड़ के तुल्य निर्जीव हो गया था।

कोई ईसाई राधाकृष्ण की मूर्ति पर हँसी उड़ाता और उससे किसी अल्प-शिक्षित हिन्दू के मन में संशय उत्पन्न होता तो जाति में कोई ब्राह्मण नहीं था जो उसका समाधान कर सकता एवं उस हँसी उड़ाने वाले ईसाई को मुँहतोड़ उत्तर दे सकता। संशय लेकर आने वाले को मूर्ख, निष्ठाहीन तथा पतित घोषित कर दिया जाता था।

स्थान-स्थान पर ईसाई पादरी हिन्दुओं के रीति-रिवाज की युक्ति-विहीनता की फबतियाँ उड़ाते फिरते थे और कोई विद्वान् हिन्दू नहीं था जो अपने रीति-रिवाज में और मान्यताओं में युक्ति एवं उपयोगिता बता सकता। जनसाधारण आपत्तिजनक रीति-रिवाज में कारण जानना चाहता तो हिन्दुओं का ब्राह्मण-वर्ग व्यवस्था दे देता कि प्रश्नकर्ता नास्तिक, धर्मविहीन और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतित हो गया है। कोई इस व्यवस्था में कारण पूछता तो उसको कह दिया जाता कि विश्वास और श्रद्धा रखो। बुद्धि का प्रयोग मत करो। बुद्धि धोखा देती है।

आक्रमणकारी मुसलमान कुछ सहस्र ही इस देश में आये थे और वे बढ़ते-बढ़ते पाँच-छः करोड़ हो चुके थे। ये मुसलमान न केवल हिन्दुओं की धर्म-व्यवस्था की हँसी उड़ाते थे, वरन् देश की राजनीतिक स्वतन्त्रता में भी बाधक हो रहे थे।

ईसाई पादरी राज्य बल के आश्रय हिन्दू-धर्म के दुर्ग पर निःशंक होकर आक्रमण कर रहे थे।

इन आघातों का परिणाम यह था कि कुछ लोग धर्म-कर्म को बकवास मान इसकी सर्वथा तिलांजलि दे रहे थे। कुछ ब्रह्म-समाज, प्रार्थनासमाज इत्यादि संस्थायें बना सब-कुछ ठीक और मान्य समझने लगे थे। कुछ अन्य हिन्दू धर्म, समाज, रीति-रिवाज छोड़ ईसाई-मुसलमान बन उनके व्यवहार को स्वीकार कर रहे थे।

इस सब पर मजेदार बात यह हो रही थी कि जो हिन्दू धर्म की बेहूदा रीति-रिवाज से दुःखी हो अथवा किसी लोभ-लालच से प्रभावित हो विधर्मी होते थे, उनको सवर्ण हिन्दू देख-देखकर प्रसन्न होते थे।

हिन्दू रहते कोई चमार घृणा का पात्र और अछूत माना जाता था, परन्तु वही चमार ईसाई हो जाने पर एक ब्राह्मण के लिये भी मान का पात्र बन जाता था।

पूजा-पाठ की बात तो यह थी कि एक शैव मिट्टी में लिंग बनाता था एक दिन में बीसियों और वह समझता था कि वह मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा है। इस पर भी दिन-भर वह अन्याय, अत्याचार और अधर्माचरण करता हुआ स्वयं को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतित हो रहा नहीं मानता था। हिन्दू-धर्म के नेता ब्राह्मण वर्ग के लोग भी उसको धर्मात्मा ही मानते थे। कारण यह कि वह अपने हाथ से मिट्टी के एक दर्जन लिंग बनाने के उपरान्त ही भोजन लेता था।

मूलशंकर ने देखा कि मृत्यु एक दुःखद् घटना है और मृत्यु पर विजय पाने के लिये वह घर से निकल पड़ा। घर में भी और बाहर भी सैकड़ों गीता पढ़ने वाले उसको मिले होंगे, परन्तु कोई भी उसको मृत्यु का रहस्य बता नहीं सका। भारत का कोना-कोना, अलखनन्दा के स्रोत से लेकर नर्मदा के स्रोत तक स्वामी दयानन्द ने खोज डाला। सब योग की महिमा बताते रहे, परन्तु किसी ने न तो योग की ठीक प्रक्रिया बताई, न ही उसकी शक्ति और सीमाओं का ज्ञान कराया। सब अन्धे के समान अन्धे के कन्धे पर हाथ रख चलते दिखाई दिये।

कोई भी बुद्धिशील व्यक्ति यह देख सकता था कि समाज और देश दिन-प्रतिदिन पतन की ओर बढ़ रहा है। परन्तु किसी को इसकी चिन्ता नहीं थी। किसी को भी इसका उपाय नहीं सूझता था। किसी को भी इस पतन का कारण दिखाई नहीं देता था।

सम्वत् १९१४ का (सन् १८५७) स्वातन्त्र्य युद्ध हुआ। परन्तु स्वामीजी ने देखा, इस युद्ध में जनता ने क्या कार्य किया? उन दिनों स्वामीजी कानपुर, झाँसी, मध्य भारत में नर्मदा के तटवर्ती क्षेत्रों में भ्रमण कर रहे थे। सम्भवतः इस आज़ादी के संग्राम के लिये जनता में उत्साह का संचार कर रहे होंगे, परन्तु वे किसी प्रकार का उत्साह उत्पन्न नहीं कर सके होंगे। मुट्ठी-भर सैनिक ही देश को स्वतन्त्र कराने में लगे थे और शेष विशाल प्रजागण या तो इस प्रयास में अरुचि ले रहा था अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेशियों की रक्षा, सहायता और समर्थन कर रहा था। कोई दया के भाव से प्रेरित, कोई लोभ और लालच के वशीभूत और कोई अपना पुराना बैर निकालने के लिये विदेशीय शासकों को विजयी बनाने में लगा था। विशाल जनसमूह पुराने खंडहरों की भाँति निर्जीव पड़ा था, जिनके समीप से शूरवीर और अत्याचारियों के काफिले गुज़र रहे हों और खंडहरों में लगे ईंट-पत्थरों की भाँति न तो शूरों को देखकर उनके मन में उत्साह का संचार होता था, न ही आततायियों को देखकर उनके कान पर जूँ रेंगती थी।

यह एक अति दुःखद्, निराशापूर्ण, प्रिय के मृत शव का-सा दर्शन था जो स्वामी दयानन्द नें सम्वत् १९१३ से १९१७ तक भारत के अवध, आगरा, कानपुर, झाँसी इत्यादि क्षेत्रों में देखा था।

परन्तु एक जाग्रत आत्मा की भाँति, जो अपूर्णता से सदैव पूर्णता की ओर अग्रसर होता है, स्वामीजी अपने ज्ञान की खोज में संलग्न थे। अब खोज का विषय योगी, जो मृत्यु से पार ले जा सके, नहीं रहा था। न ही खोज का विषय आत्मज्ञान रहा था। वरन् यह खोज थी उक्त दोनों बातों के अतिरिक्त देश की सोयी आत्मा को जाग्रत करने के लिये पारसमणि की।

स्वामी दयानन्द को इस खोज में सफलता मिली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय अध्याय

: १ :

पंजाब में करतारपुर के समीप गंगापुर नामक ग्राम में एक नारायणदत्त नामक सारस्वत ब्राह्मण के घर एक बालक का जन्म हुआ। बालक की जन्म-तिथि ज्ञात नहीं। जन्म के समय किसी को यह भास नहीं हो सका कि इस बालक के हाथ से एक ऐसे आन्दोलन को प्रेरणा मिलने वाली है, जो एक बार उत्तरी भारत में शताब्दियों तक अपना प्रभाव बनाये रखेगा और इसकी गूंज पूर्ण भारत की सीमाओं को पार कर देशान्तर में जाने वाली है।

यह बालक जब पाँच ही वर्ष का था कि उसको चेचक निकल आयी और उस रोग ने उसकी आँखें छीन लीं। बारह वर्ष की आयु में माता-पिता का देहावसान हो गया और वह बालक अनाथ हो गया। बालक का एक बड़ा भाई भी था, किन्तु वह अन्धे भाई का भार वहन नहीं कर सका। बालक घर की परिस्थिति से दुःखी हो घर से निकल ऋषिकेष की ओर चल पड़ा। तब तक ब्राह्मण होने के नाते उसे केवल गायत्री मंत्र ही आता था और गंगाजी में बैठ गायत्री मंत्र का जाप करना उसकी मुख्य दिनचर्या थी। लगभग एक वर्ष तक इस प्रकार जीवन व्यतीत करते हुए वह कनखल पहुँचा और वहाँ स्वामी पूर्णानन्दजी से संन्यास ग्रहण कर शिक्षा ग्रहण करने लगा। एक चक्षुहीन बालक के लिये शिक्षा ग्रहण करना सम्भव न होता यदि ईश्वर ने उसको विशेष प्रतिभा न दी होती। यह बालक जो अब विरजानन्द दण्डी हो गया था, ईश्वरदत्त प्रतिभा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी विरजानन्द दण्डी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जो कदाचित् गायत्री मंत्र के जाप से अति तीव्र हो चुकी थी, आँखों के अभाव को पार कर शास्त्र का ज्ञाता होने लगा। विरजानन्द जी की यह विशेषता थी कि वे जिस भी श्लोक को एक-दो बार सुन लेते थे, वह उन्हें कंटस्थ हो जाता था। इस प्रकार वह ज्ञान संचय करने लगे।

स्वामी पूर्णानन्द से उन्होंने षड्लिंग व्याकरण पढ़ा। तदनन्तर वे काशी में चले गये और वहाँ व्याकरण और शास्त्र अध्ययन करते रहे। वे व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान् बन गये। जब वे पढ़ कर अध्यापन कार्य करने लगे तो उनके पढ़ाने की एक विशेष शैली बन गई। उससे उनकी ख्याति फैलने लगी।

दंडीजी के जीवन ने भी करवट ली। एक बार काशीजी में ही उनके अपने पड़ोस में एक दक्षिणी पंडित रहते थे, जो प्रतिदिन मूल अष्टाध्यायी का पाठ किया करते थे। विरजानन्द उस पाठ को सुनते थे और सुनते-सुनते उनके मन में क्रान्ति उत्पन्न हो गई। व्याकरण के ऋषि-प्रणीत क्रम को जान कर, सिद्धान्त कौमुदी इत्यादि व्याकरण के ग्रन्थों को अस्वाभाविक और दुरूह समझने लगे। एक दिन मन में विप्लव आया और उन्होंने सब अर्वाचीन ग्रन्थों का परित्याग कर अष्टाध्यायी पर अपनी शिक्षा आधारित कर दी। सुना जाता है कि इससे पूर्व के सभी ग्रन्थ उन्होंने गंगाजी में बहा दिये।

इस प्रकार के निष्ठावान थे स्वामी विरजानन्द दण्डी। एक बार वे महाराज अलवर को संस्कृत पढ़ाने के लिये नियुक्त हो गये। इस नियुक्ति की शर्त यह थी कि महाराज उनसे तीन घंटे नित्य व्याकरण पढ़ा करेंगे। महाराज कुछ काल तक तो शर्त का पालन करते रहे, परन्तु एक दिन नागा हो ही गया। और उसी दिन विरजानन्दजी ने अपना दण्ड उठाया और वहाँ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चल दिये।

वे मथुरा पहुँचे और अपना अध्यापन कार्य मथुरा में एक चौबारे में बैठकर करने लगे। वहीं वे रहते भी थे। वहीं सम्वत् १९१७ में स्वामी दयानन्द ज्ञान उपलब्धि की खोज में, स्वामी विरजानन्द की ख्याति सुन आ पहुँचे। स्वामीजी दण्डीजी के सामने पहुँचे। उनसे शिक्षा पाने की याचना करने लगे तो प्रथम प्रश्न दण्डीजी ने जो पूछा वह था, "अभी तक क्या पढ़ा है ?"

"सारस्वत पढ़ा हूँ।"

"इन अनार्ष ग्रन्थों को यमुना में प्रवाहित कर दो, तभी तुम आर्ष ग्रन्थों के पढ़ने के अधिकारी बन सकोगे।"

कहते हैं कि स्वामी दयानन्द ने गुरु की आज्ञा का अक्षरश: पालन किया और दण्डीजी से पढ़ने लगे। उस समय ऐसे सेठ-साहूकार थे जो विद्यार्थियों का भोजन-वस्त्र आदि देते थे। मथुरा में रहते हुए स्वामी दयानन्द अमरलाल जोशी के भंडारे में भोजन किया करते थे। लाला गोवर्धन लाल सर्राफ से चार आने मासिक रात में अध्ययन हेतु दीपक में तेल के लिये उनको मिलता था। इस प्रकार तीन वर्ष तक सम्वत् १९१७ से १९२० तक गुरु विरजानन्द दण्डी से वे शास्त्राध्ययन करते रहे। वे विरजानन्दजी के परम प्रिय शिष्य थे। दोनों में शास्त्राध्ययन के अतिरिक्त भी अनेकानेक विषयों पर वार्तालाप हुआ करता था। इन सब का परिणाम यह हुआ कि स्वामी दयानन्द सरस्वती महर्षि दयानन्द बन गये।

महर्षि का अर्थ है वह विद्वान् जो वेदमंत्रों का अर्थ भली प्रकार कर सके। इस दृष्टि से स्वामी दयानन्द अपने काल के महर्षि ही कहे जा सकते हैं। कारण यह कि स्वामीजी यह मानते थे कि वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक है। ये ईश्वरीय ज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ग्रंथ हैं और कोई विद्या ऐसी नहीं, जिसका ज्ञान वेदों में न मिलता हो। ऐसा ही वे जीवन-भर प्रचार भी करते रहे।

योगी अरविन्द ने एक स्थान पर लिखा है कि भारत में दो सहस्र वर्ष में केवल स्वामी दयानन्द ही एक ऐसे व्यक्ति हुए हैं जो वेदों का प्रचार करते थे और वेदों को ही ईश्वरीय ज्ञान घोषित करते थे। अधिकांश हिन्दू विद्वान् पुराण, भागवत, महाभारत तक ही जाते रहे हैं। दर्शनों में भी प्रायः वेदान्त सूत्रों को और वह भी स्वामी शंकराचार्य के भाष्य द्वारा ही पढ़ा जाता था। स्वामी दयानन्द पुराणादि ग्रंथों को अनार्ष ग्रन्थ मानते थे और कहते थे, जो कुछ भी उनमें वेद विरुद्ध है, वह माननीय नहीं है।

वेद (चारों संहितायें) ब्राह्मण ग्रन्थ, दस उपनिषद् तथा षट्दर्शन को वे आर्ष ग्रन्थ कहते थे। इनमें भी स्वतः प्रमाण वे केवल वेदों को ही मानते थे।

स्वतः प्रमाण का अर्थ है, उनकी प्रामाणिकता के लिये किसी दूसरे ग्रंथ के साक्षी की आवश्यकता नहीं। और अन्य सब ग्रंथों की प्रामाणिकता वहाँ तक ही है, जहाँ तक वे वेदानुकूल हैं।

उस काल में वेद (ऋक्, यजु, साम और अथर्व) पर महीधर और सायण के भाष्य प्रचलित थे, परन्तु स्वामीजी ने उनके भाष्यों को प्रामाणिक नहीं माना। इनके अतिरिक्त कुछ पाश्चात्य विद्वान् भी वेद-भाष्य कर रहे थे। उनमें मैक्समूलर तथा ग्रिफिथ विख्यात हैं। स्वामी दयानन्द इनके भाष्यों को भी गलत मानते थे।

एक ओर समस्त हिन्दू विद्वान् सायण इत्यादि को प्रतिष्ठा देते थे; दूसरी ओर मैक्समूलर इत्यादि को सरकारी तथा योरोपियन मान्यता प्राप्त थी। स्वामीजी दोनों को भ्रांत मान

—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

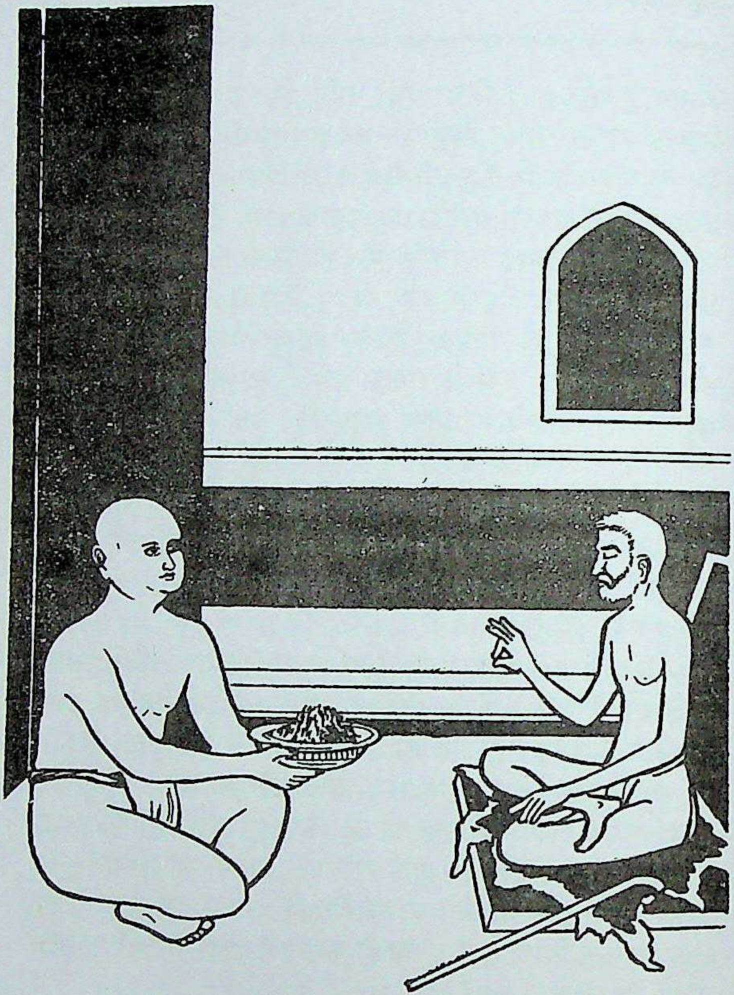

स्वामी दयानन्द दक्षिणा के लिये लवंग लेकर उपस्थित हुए, परन्तु स्वामी विरजानन्द ने कहा—दक्षिणा में तुमसे मैं यह प्रतिज्ञा चाहता हूँ कि तुम जीवनपर्यन्त आर्ष ग्रन्थों का प्रचार करते रहोगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका खंडन करते थे।

महर्षि दयानन्द, तीन वर्ष तक स्वामी विरजानन्द दण्डी से शिक्षा प्राप्त कर इस प्रकार के विचार लेकर निकले। इन तीन वर्षों में कितना पढ़ा होगा कुछ कहा नहीं जा सकता। हाँ यह कहा जा सकता है कि दण्डी जी की प्रतिभा ने दयानन्द जैसे अनुभवी और मेधावी विद्यार्थी को इस छोटे से काल में ऐसी गुर की बातें बताई होंगी, जिनसे दयानन्द के ज्ञान-चक्षु खुल गये होंगे। और वे उन चक्षुओं से सत्य-असत्य के निर्णय करने में सिद्धहस्त हो गये।

: २ :

शिक्षा के उपरान्त स्वामी जी गुरु के पास आधा सेर लवंग दक्षिणा के रूप में लेकर उपस्थित हुए। स्वामी विरजानन्द ने कहा, "मैं इतनी मात्र गुरु दक्षिणा से सन्तुष्ट नहीं हूँ। मैं तो तुमसे यह प्रतिज्ञा चाहता हूँ कि तुम जीवनपर्यन्त आर्ष ग्रन्थों का प्रचार और अनार्ष ग्रन्थों का खण्डन करोगे। तथा भारत में वैदिक धर्म की स्थापना के हेतु अपने प्राण तक निछावर कर दोगे।"

स्वामी दयानन्द ने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य की और उसके पालन का वचन दे दिया। मरणपर्यन्त स्वामी जी ने उस वचन का पालन किया।

मथुरा से चलकर स्वामी जी आगरा पहुँचे और वहाँ सेठ गुल्लामल के बाग में ठहर गये। वहाँ साधु-सन्त, महात्मा ठहरा करते थे।

स्वामी दयानन्द का प्रथम परिचय पण्डित सुन्दरलाल, पण्डित बाल मुकन्द और दयाराम से हुआ। ये तीनों धार्मिक प्रवृत्ति के लोग थे। इनसे स्वामी जी धर्म-चर्चा करने लगे तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चर्चा में भाग लेने वालों का विस्तार होने लगा।

आगरा में स्वामी जी दो वर्ष तक रहे। इस काल में वे अपने भावी कार्यक्रम का मार्ग खोजने में लगे रहे। एक नये पण्डित मोहनलाल विष्णुलाल पाण्ड्या नें उनसे पूछा—"महाराज! आप क्या मानते हैं?"

पाण्ड्या जी का अभिप्राय था कि वे किस देवी-देवता की पूजा-उपासना ठीक समझते हैं।

स्वामी जी नें कह दिया, "मैं अभी विचार ही कर रहा हूँ।"

इससे यह प्रतीत होता है कि स्वामी दयानन्द इस काल में अपने देश-भ्रमण से प्राप्त अनुभव और गुरु विरजानन्द से मिली शिक्षा पर मनन और दोनों में समन्वय स्थापित कर रहे थे। इन दिनों वे अपने गुरु महाराज से पत्र द्वारा शंका समाधान भी किया करते थे।

पण्डित सुन्दरलाल स्वामी जी से अष्टाध्यायी और भगवत्-गीता पढ़ा करते थे। पण्डित जी शिव की पूजा करते थे। स्वामी जी के सम्पर्क में आने पर भी वे उस पार्थिव पूजा को करते रहे। ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी जी ने उनको मना नहीं किया।

स्वामी जी इन दिनों महाभारत का स्वाध्याय करने लगे। फिर कुछ लोगों के कहने पर ये विद्यारण्य स्वामी कृत पंचदशी का पाठ करने लगे। एक स्थल पर उसमें यह लेख आया कि ईश्वर को भी भ्रम हो जाया करता है। इस पर उन्होंने इस पुस्तक का पाठ बन्द कर दिया। इसके उपरान्त वे गीता का पाठ करनें लगे।

इन दिनों स्वामी दयानन्द मूर्ति-पूजा का खंडन करने लगे थे। भागवत पुराण का खंडन भी वे करते थे और महाभारत, भगवद्गीता तथा योग-वशिष्ठ की कथा करते थे।

यहाँ इतना समझ लेना चाहिये कि स्वामी दयानन्द के खंडन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अभिप्राय और ढंग क्या होता था। उनका खंडन से अभिप्राय होता था कि वह बात वेद के विपरीत है। वेदों में इसका विधान नहीं है। मूर्ति-पूजा के विषय में तो उनकी धारणा तब से ही बनी थी जब उन्होंने शिवरात्रि की रात को एक चूहे को शिव-लिंग पर चढ़ मिष्ठान्न खाते देखा था। तव का संशय अनुभव और शिक्षा से अधिक दृढ़ हो गया था। स्वामी जी का कहना था कि वह मूर्ति परमात्मा नहीं हो सकती। यदि वह परमात्मा नहीं तो उस पर जल चढ़ाना एवं उसकी पूजा करना व्यर्थ है। वे यह भी कहते थे कि वेदों में, जो हिन्दुओं की सर्वमान्य पुस्तक है, मूर्ति पूजा अथवा शिवलिंग की पूजा का विधान नहीं है।

इसी प्रकार भागवत पुराण में लिखी बातों को वे वेदमत के विपरीत कहकर अमान्य कहते थे।

दो वर्ष तक आगरा में रहकर अपने विचारों को परिपक्व कर और अपने कार्य का मार्ग विचार कर वे आगरा से निकले और ग्वालियर जा पहुँचे।

ग्वालियर में १०८ भागवत पाठों का आयोजन था। दूर-दूर से भागवत पाठ के लिये ब्राह्मण बुलाये गये थे। स्वामी दयानन्द वहाँ भागवत विषय पर ही शास्त्र-चर्चा के लिये गये थे। माघ शुक्ल ३, सम्वत् १९२२ को भागवत पाठ आरम्भ हुआ। स्वामी दयानन्द ने गंगाप्रसाद दफेदार के द्वारा सन्देश भेजा कि वे भागवत ग्रन्थ की मान्यता के विषय में चर्चा करना चाहते हैं। ब्राह्मण वर्ग इससे आतंकित हो गया।

ग्वालियर के महाराज ने स्वामी जी से भागवत पाठ का प्रस्ताव किया। स्वामी जी हँस दिये। महाराज ने इस ग्रन्थ के पढ़ने का महात्म्य पूछा तो स्वामी जी ने हँसते हुए बताया, "इस पाठ का परिणाम दुःख और क्लेश है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पता चला है कि उन दिनों स्वामी जी सूर्य को अर्घ्य देते थे। वे शिव की उपासना का उपदेश करते थे, परन्तु शिव की पत्थर की मूर्ति 'शिवलिंग' को व्यर्थ की वस्तु बताते थे। प्राणायाम करते थे, विष्णु सहस्रनाम का पाठ करते थे, दुर्गा सप्तदशी को भी मानते थे।

ग्वालियर से स्वामी दयानन्द का भ्रमण आरम्भ हुआ। इस भ्रमण में वे स्थान-स्थान पर गये। प्रत्येक स्थान पर कुछ दिन ठहरते और जो भी विद्वान मिलता, उससे शास्त्र-चर्चा करते थे।

अभी तक देश में शास्त्र-चर्चा की पुरानी शैली प्रचलित थी। स्वामी शंकराचार्य का मंडनमिश्र से हुआ शास्त्रार्थ देश के विद्वानों को अभी भी स्मरण था और स्वामी दयानन्द उसी परिपाटी पर शास्त्रार्थ करने का विचार करते थे। वे जहाँ भी जाते, वहीं के विद्वानों को शास्त्रार्थ का आह्वान करते। इस पर भी स्वामी शंकराचार्य के काल में और इस काल में बहुत अन्तर आ चुका था। उस समय स्वामी शंकराचार्य और मंडनमिश्र में शास्त्रार्थ हुआ था। शास्त्रार्थ में पंडित मंडनमिश्र की पत्नी मध्यस्थ बनी और जब मध्यस्थ ने निर्णय दिया कि मंडनमिश्र स्वामी शंकराचार्य के प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके तो मंडनमिश्र स्वामी जी के शिष्य हो गये। गृहस्थ छोड़ सन्यास लेकर वे शंकराचार्य के मत का प्रचार करने लगे।

इस काल में शास्त्रार्थ प्रायः वितंडावाद में परिणत हो जाता था। हठधर्मी पर आचरण होता। जयपुर में एक शास्त्र-चर्चा में कुछ पंडित यहाँ तक कह गये कि महाभाष्य कोई व्याकरण का ग्रन्थ ही नहीं है।

स्वामी दयानन्द के विचार अभी परिपक्व नहीं हुए थे। वे बदल रहे थे। इन शास्त्र-चर्चाओं में उनको बहुत बातों का पता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता था। जहाँ उनको अपनी भूल प्रतीत होती, वे मानकर अपना मत परिवर्तन कर लेते थे।

इन दिनों स्वामी जी शरीर पर भस्म रमाते थे और रुद्राक्ष धारण करते थे, परन्तु कुछ ही वर्ष बाद वे वस्त्र पहनने लगे। केवल मात्र वेद, ब्राह्मणग्रन्थ और दर्शनशास्त्र को ही वे मान्यता देने लगे। मनुस्मृति को वे अन्त तक मानते रहे। भगवद्गीता के विषय में उनके विचार बदल गये थे। वे इसके लिखने के ढँग को पसन्द नहीं कर सके।

स्वामी जी ने स्वयं लिखा है, "जयपुर में मैंने वैष्णव मत का खंडन करके शैव मत की स्थापना की। जयपुर के महाराज रामसिंह ने भी शैव मत ग्रहण किया। इससे शैव मत का फैलाव हुआ और सहस्रों रुद्राक्ष मालाएँ मैंने अपने हाथ से दीं। धीरे-धीरे शैव मत का प्रचार इतना हुआ कि हाथी, घोड़े आदि के गलों में भी रुद्राक्ष की मालाएँ पहनाई जाने लगीं।

जयपुर के महाराज शैव मतानुयायी हो गये। काशी से व्यवस्था भी शैव मत के पक्ष में आ गई थी और लोग तिलक छोड़ त्रिपुंड धारण करने लगे। कंठी के स्थान पर रुद्राक्ष की माला पहनी जाने लगी।"

स्वामी दयानन्द जयपुर में चार मास तक रहे। इस प्रवास में एक बात स्पष्ट हो गई कि स्वामी दयानन्द का व्यक्तित्व अति महान् था। उनके कथन में प्रभाव होता था। लोग उनके सम्मोहन में आ जाते थे।

पुष्करराज में स्वामी दयानन्द ने यह कहना आरम्भ कर दिया कि जिस शिव की उपासना के लिये वे कहते हैं, वह पार्वती के पति शिव नहीं हैं। उनका शिव सच्चिदानन्द परमेश्वर है। वह कल्याणकारी होने से शिव कहाता है। वे वैष्णव मत का खंडन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते थे। उनको शास्त्रार्थ में पराजित कर उनके गले से तुलसी की माला उतरवा तिलक के लिये विभूति अपने पास से देते थे।

पुष्करराज में दक्षिण के एक विद्वान् व्यंकटशास्त्री नाम के रहते थे। उनके साथ स्वामी दयानन्द की शास्त्र-चर्चा हुई। विवाद का विषय भागवत्पुराण था। विवाद चलता-चलता 'देवासुर' शब्द की व्याख्या पर समाप्त हुआ।

व्यंकटशास्त्री और उनके गुरु अघोरी स्वामी जी के भक्त हो गये। दोनों संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे। लगभग चार सौ ब्राह्मणों में अघोरी पंडित ने घोषणा की कि दयानन्द जी का कथन सत्य है।

इस घोषणा का पुष्करराज के मेले में इतना प्रभाव हुआ कि वहाँ के ब्रह्मा जी के मन्दिर के समीप स्वामी जी के डेरे में कंठियों का ढेर लग गया।

स्वामी जी मूर्तिपूजा का घोर विरोध करते थे। एक दिन एक वृद्धा स्त्री मन्दिर में मूर्ति का दर्शन कर स्वामी जी के दर्शनों के लिये आई। जब उसने बताया कि वह मन्दिर में ब्रह्मा की मूर्ति का दर्शन कर महाराज के दर्शन करने के लिये आई है तो स्वामी जी ने पूछ लिया, "तो भगवान ब्रह्मा ने कुछ कहा नहीं ?"

वृद्धा ने कहा, "महाराज ! उनकी सुन आई हूँ और आपकी भी सुन रही हूँ।"

इस पर स्वामी जी उठकर वृद्धा को पुनः मन्दिर में ले गये और कहने लगे, "माता जी ! अब इनसे पूछिये। भला मैं भी तो सुनूं कि ये क्या कहते हैं ?"

इस पर वृद्धा ने मुस्कराते हुए कहा, "महाराज, यह मूर्ति तो क्या, आपके सामने सभी चुप हो जाते हैं। जो बोलता है वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Central Library 167961 Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

आपकी पीठ पीछे ही बोलता है।

स्वामी जी की विद्वत्ता की इतनी धाक बैठ गई थी कि उनके सम्मुख उनकी बात का कोई उत्तर नहीं दे सकता था।

एक बार एक वेदान्ती से वार्त्तालाप में स्वामी जी ने पूछ लिया, "परमात्मा सर्वव्यापक है अथवा नहीं ?"

वेदान्ती समझ नहीं सका कि स्वामी जी किसलिये पूछ रहे हैं। उसने कह दिया, "हाँ, सर्वव्यापक है।"

स्वामी जी ने तुरन्त कहा, "यदि वह सर्वव्यापक है तो 'सर्व' नहीं हो सकता।"

वेदान्ती निरुत्तर हो मुख देखता रह गया। ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी जी उन दिनों इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया की सम्वत् १९१५ (१८५८) की घोषणा कि भारत में सब धर्मों का आदर किया जायेगा, पर विश्वास करते थे। अतः इसके आधार पर वे भारत के हाकिमों से मिलकर गोवध बन्द कराने का प्रयत्न करने लगे। उन दिनों गवर्नर जनरल के एजेन्ट अजमेर में रहते थे। स्वामी जी ने उससे मिलकर गोवध बन्द करने के लिये कहा। परन्तु सफलता नहीं मिली। गवर्नर जनरल के एजेन्ट करनल ब्रुक ने कहा कि वह तो कर्मचारी है। नीति निर्धारित करने का कार्य इंग्लैंड में होता है। इस पर स्वामी जी की यह धारणा शीघ्र ही विलुप्त हो गई कि किसी विदेशीय राजा से किसी प्रकार के कल्याण की आशा रखी जा सकती है।

उनके जीवन का यह काल (सम्वत् १९२० से १९२३ तक) मनोविश्लेषण का काल था। इस काल में वे भारतीय मत-मतान्तरों का अध्ययन करते रहे और साथ ही इस्लाम और ईसाई मत का ज्ञान भी प्राप्त करने में लीन रहे। इस काल में उनका संपर्क कुछ पादरियों से भी हुआ था। अजमेर में एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोबिन्सन नाम के पादरी से स्वामी जी की धर्म-चर्चा हुई।

ईसाई लोग पुराण इत्यादि धर्मग्रन्थ पढ़कर उनकी कहानियाँ सुना-सुनाकर हिन्दू-धर्म की खिल्ली उड़ाते रहते थे। स्वामी जी ने उस पादरी से कहा कि पुराण तो कथा-कहानियाँ हैं। ये धर्म-पुस्तकें नहीं हैं। हिन्दू-धर्म के ग्रन्थ वेद, उपनिषद्, दर्शनादि हैं। इस पर रोबिन्सन ने एक संस्कृत का वाक्य पढ़कर कहा कि वह वेद-मन्त्र है। स्वामी जी ने कह दिया कि यह वेद-वाक्य प्रतीत नहीं होता। इस पर रोबिन्सन ने कह दिया कि स्वामी जी को यजुर्वेद का ज्ञान नहीं है।

इस समय स्वामी को विचार आया कि भारत में इस्लाम और ईसाई-धर्म का भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। अन्यथा उनसे शास्त्र-चर्चा में लाभ नहीं होगा। स्वामी जी की आयु इकतालीस वर्ष की हो गई थी। अखंड ब्रह्मचर्य के कारण उनकी शारीरिक शक्ति महान् थी। साथ ही योगध्यान के कारण उनमें ओज और प्रभाव भी था। निर्भीकता उनका विशेष गुण था। वे पौराणिक मत का खंडन करते थे और उनके गढ़ में निर्भय होकर प्रचार करने चले जाते थे। महाराज ग्वालियर द्वारा १०८ बार भागवत-पारायण का समाचार जान वहाँ जा धमके थे। और महाराज के रुष्ट हो जाने पर भी, भागवत के विद्वानों से लोहा लेने के लिये उनको ललकारने लगे थे।

फिर पुष्करराज में ब्रह्मा जी के मन्दिर के समीप ब्रह्मा जी की मूर्ति के पूजन का विरोध करने लगे।

सैकड़ों पौराणिक पंडितों में अकेले खड़े हो, अपने मन की बात कह देते थे। उनको सैकड़ों के विरोध का भी कभी भय नहीं हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशनगंज में शारीरिक विरोध का अवसर भी आ गया। अजमेर से लौटते हुए वे किशनगंज में ठहरे। वहाँ के राजा पृथ्वीसिंह वल्लभ-सम्प्रदाय के मानने वाले थे। यह सम्प्रदाय वैष्णव है और स्वामी जी पुष्कर में ढेरों तुलसी की कंठियाँ उतरवा आये थे। अतः किशनगढ़ के राजा स्वामी जी के घोर विरोधी हो गये।

एक दिन राजा साहब के मित्र ठाकुर गोपालसिंह ३०-४० मनुष्यों और ५-६ पंडितों के साथ स्वामी जी को अप्रतिष्ठित करने के लिये उनके डेरे पर आ धमके। स्वामी जी उनमें बैठ वल्लभ-सम्प्रदाय का खंडन करने लगे। इससे रुष्ट हो वे स्वामी जी पर आक्रमण करने के लिये उनको गालियाँ देने लगे। स्वामी जी खड़े हो गये और अपना दंड ले उनको ललकारने लगे। स्वामी जी के कुछ भक्त डेरे पर थे। वे भी आ गये। परन्तु वल्लभ-सम्प्रदाय वाले चुपचाप भाग गये।

: ३ :

सम्वत् १९२४ में स्वामी जी हरिद्वार जा पहुँचे। वे वहाँ चैत्र के मध्य में पहुँचे थे। कुम्भ प्रथम बैशाख को होने वाला था, इस पर भी भीड़ एकत्रित होने लगी थी।

इससे पूर्व सम्वत् १९१२ में भी स्वामी जी कुंभ के मेले पर आये थे। तब वे किसी योगी की खोज में थे। परन्तु इस बार कुम्भ के अवसर पर तो वे लोक-सुधार की भावना से आये थे।

इन १२ वर्षों में स्वामी जी के मन में भारी अन्तर आ चुका था। भ्रमण और जन-सम्पर्क के अनुभव से, सम्वत् १९१४ (सन् १८५७) के राजनीतिक विप्लव के अनुभव और उस विप्लव की असफलता से शिक्षा ग्रहण कर तथा स्वामी विरजानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दण्डी से शिक्षा और दिशा-दर्शन पाकर वे अब भारतवर्ष को कुछ दिशा देने का विचार करने लगे।

उन्होंने यह समझ लिया था कि देश में एक राष्ट्र नहीं रहा। इस देश में अनेकानेक भारतीय सम्प्रदायों के अतिरिक्त इस्लाम और ईसाई भी आये हैं और इनमें परस्पर घोर संघर्ष चल रहा है। इस्लाम भारत में पुनः मुसलमानी राज्य स्थापित करने के लिये अपने अनुयाइयों की संख्या बढ़ा रहा है। ईसाई अंग्रेजी राज्य को सुदृढ़ करने के लिये धन, बल, छल, से ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे हैं। देश में पुराने मुसलमानी राज्य के अवशेष कुछ नवाब, निज़ाम और सुलतान शासक रह गये थे। वे सब-के-सब हिन्दुओं को इस्लाम में हज़म करने के लिये संलग्न थे। ईसाई अंग्रेज शासकों की सहायता से ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे थे। यह प्रचार भी हिन्दू धर्म मानने वालों में होता था। हिन्दू जाति असंख्य सम्प्रदायों में बंट गई थी और किसी सम्प्रदाय में शक्ति नहीं थी कि इस्लाम अथवा ईसाई धर्म का विरोध कर सके।

अंग्रेज़ी सरकार, एक प्रकार से हिन्दू जनता को इस्लाम और ईसाई धर्म में विलीन हो जाने में सहायक हो रही थी। वह अपने स्कूल-कालेजों में धर्मविहीन शिक्षित निर्माण कर रही थी। और ये धर्मविहीन हिन्दू सुगमता से ईसाई धर्म एवं इस्लाम स्वीकार कर लेते थे। किंचिन्मात्र भी धन, पद अथवा स्त्री का प्रलोभन इनको उन धर्मों में ले जाने में सफल हो जाता था।

मत-परिवर्तन हो जाने पर ये लोग विदेशी राज्य के साथ लगाव अनुभव करने लगते थे। देश-प्रेम और देशीय राज्य अर्थात् स्वराज्य की लालसा उनमें नहीं रहती थी। स्वामी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दयानन्द ने देश और जाति की इस अवस्था का अध्ययन एवं मनन किया। कदाचित् अपने गुरु स्वामी विरजानन्द से भी इस पर विचार-विनिमय किया था और स्वामी जी को इस समस्या का सुझाव यह समझ आया कि राष्ट्र को सुसंगठित करने के लिये हिन्दू-धर्म के सम्प्रदायों को एक धुरी पर केन्द्रित कर देना है। जब सब हिन्दू सम्प्रदाय एक केन्द्र पर एकत्रित हो जायगा तब ही विदेशीय धर्मावलम्बी विदेशी राज्य के स्तम्भ नहीं बनेंगे।

वेद और आर्ष ग्रन्थों को आधार मानकर हिन्दू-धर्म के सम्प्रदायों के एक हो जाने की प्रेरणा देना स्वामी जी को अभीष्ट था। इसी कारण वे कुंभ के मेले पर हरिद्वार गये थे। कुंभ के मेले पर प्राय: सब हिन्दू सम्प्रदायों के विद्वान हरिद्वार में एकत्रित होते थे। स्वामी जी सम्वत् १९१२ के कुंभ पर उपस्थित हो यह देख चुके थे। अत: इस महान समागम में पहुँच कर सबको वेद के आधार पर एकत्रित होने का उपदेश देने का वे यत्न करने लगे।

ऋषिकेश और हरिद्वार के मध्य मार्ग पर, हरिद्वार से तीन कोस के अन्तर पर सप्त सरोवर नाम के तीर्थ पर स्वामी जी ने अपना डेरा लगा दिया। वहाँ पर आठ-दस छप्पर और एक बड़ा-सा आँगन बना दिया। उसमें पन्द्रह-सोलह अन्य सन्यासियों के साथ स्वामी जी रहने लगे। अहाते के बाहर एक ध्वज, 'पाखंडखंडिनी पताका' लिखकर लटका दिया गया।

डेरा लगा और प्रवचनों का तांता लग गया। मूर्तिपूजा, भागवत और अवतारवाद तथा तीर्थ, तिलक, छाप, कंठी, चक्रांकन इत्यादि बातों का खंडन होने लगा। जब इस प्रकार की बातें होने लगीं तो इसकी चर्चा मेले-भर में फैलने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस काल में उक्त बातों की निन्दा विधर्मी ही करते थे। इस प्रकार वे हिन्दुओं को धर्म-परिवर्तन की प्रेरणा देने के लिये ऐसी बातें कहते थे। स्वामी दयानन्द का कथन यह था कि हिन्दूमात्र की एक स्वतः प्रमाण धर्म पुस्तक वेद है और वेदों में ऐसा कुछ भी नहीं है। यह सब पाखंड है। हिन्दूमात्र को यह सब छोड़कर वेद धर्म जो हिन्दुओं का और मनुष्यमात्र का एक सत्य धर्म है, पर आरूढ़ हो जाना चाहिये।

ईसाई और मुसलमान हिन्दू सम्प्रदायों की इन बातों का वर्णन कर कहते थे कि हिन्दू धर्म झूठा है और सच्चा धर्म तो ईसाई धर्म है, अथवा इस्लाम धर्म है। परन्तु स्वामी दयानन्द यह कहते थे कि हिन्दू धर्म के सब सम्प्रदायों में मूलग्रन्थ वेद हैं और हिन्दू धर्म पर दृढ़ रहने के लिये सबको वेद के अनुसार अपना सम्प्रदाय कर लेना चाहियें। तब ही वे सच्चे हिन्दू बन सकेंगे।

इस नवीन शैली की बातें सुन मेले में स्वामी जी की व्यापक चर्चा होने लगी। एक बार तो सबको यह सुखद् प्रतीत हुआ परन्तु उन पंडे-पुजारियों को जो सम्प्रदाय अनेक होने से धन कमाते थे, स्वामी दयानन्द की विवेचना, उनके अपने निहित स्वार्थों पर आघात प्रतीत हुई। वे सब स्वामी दयानन्द की निन्दा करनें लगे। वे स्वामी जी को नास्तिक और कलियुग की उपज बताने लगे। कुछ संस्कृतज्ञ स्वामी जी के प्रवचनों में पहुँच वाद-विवाद और धर्म-चर्चा भी करने लगे। स्वामी दयानन्द का विचार एवं तर्क का प्रवाह इतना प्रबल होता था कि उनके सामने कोई टिकता नहीं था। प्रायः निरुत्तर लौट जाते थे।

अब स्वामी जी का पहला भ्रमण गंगातटवर्ती नगरों और ग्रामों में आरम्भ हुआ। जहाँ-जहाँ भी आप गये, वहाँ आठ बातों का खंडन करने लगे। १—अठारह पुराण; २—मूर्तिपूजा;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३—शैव, शाक्त, रामानुज आदि सम्प्रदाय; ४—तंत्र ग्रंथ, वाम मार्ग इत्यादि; ५—भाँग, शराब इत्यादि मादक द्रव्य; ६—पर-स्त्रीगमन; ७—चोरी; ८— छल, अभिमान, झूठ इत्यादि ।

इन सबके खंडन का आधार वेद था। स्वामी जी इन सबका खंडन और वेद मत का मंडन करते थे। इस सब भ्रमण में वे स्वच्छन्द विचरते रहे। जिस दिन इच्छा होती अपनी लंगोटी कमण्डल उठाया और चल दिये।

स्वामी जी भिक्षा माँगने नहीं जाते थे। जब कभी जो कुछ अपने ठहरने के स्थान पर मिल जाता, उसी से क्षुधा शान्त कर लेते थे। इस भ्रमण में उनको कई बार भूखा भी रहना पड़ा। एक बार तो उनको तीन दिन तक निरन्तर भूखा रहना पड़ा।

वे हरिद्वार से चल ज्वालापुर, लंडौर, शुक्रातल, मीरपुर, मुहम्मदपुर, परीक्षितगढ़, गढ़मुक्तेश्वर, कर्णवास, अनूपशहर, फर्रुखाबाद, सोरों इत्यादि स्थानों पर घूमते हुए कानपुर प्रयाग-राज और फिर काशी जी जा पहुँचे।

इस भ्रमण में स्वामी जी के साथ अनेक प्रकार की घटनायें घटीं। यद्यपि अनेक स्थानों पर पंडितों ने निरुत्तर होने पर स्वामी जी की असत्य निन्दा करनी आरम्भ कर दी थी, इस पर भी कहीं-कहीं लोग सत्य हृदय से शास्त्र पर श्रद्धा रखते थे। ऐसी एक घटना अनूपशहर में हुई। वहाँ के पंडितों से मूर्ति-पूजा पर शास्त्रार्थ हुआ। पहले ही यह मान लिया गया कि जो बात वेद में नहीं होगी, वह माननीय नहीं होगी। तदनन्तर मूर्तिपूजा वेद में से न दिखा सकने पर पंडितों ने यह स्वीकार कर लिया कि स्वामी जी सत्य कहते हैं। यह बात जब जनता में प्रसारित हुई तो जनता ने अपने घरों से ठाकुरों की मूर्तियाँ निकाल-निकाल कर गंगाजी में प्रवाहित करनी आरम्भ कर दीं। कंठियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टूटने लगीं।

इस बात को देख उन लोगों ने जिनके निहित स्वार्थ मूर्ति-पूजा में थे, स्वामी जी को पान में विष दे दिया। जब स्वामी जी को इस बात का ज्ञान हुआ तो उन्होंने न्यौली-क्रिया से विष निकाल दिया। पान खिलाने वाला पकड़ लिया गया और लोगों ने उसको पुलिस के हवाले करने का विचार किया, किन्तु स्वामी जी ने उसे मुक्त करवा दिया।

जिला बुलन्दशहर के चौसी स्थान पर नन्दराम ब्राह्मण चक्रांकित सम्प्रदाय का प्रचार करता था। जब स्वामी जी ने यहाँ पर चक्रांकित मत का खंडन किया तो नन्दराम अपने साथ बीस-पच्चीस जाट लेकर वहाँ आ पहुँचा। जब स्वामी जी से बात-चीत होने लगी तो नन्दराम हतप्रभ होकर अपने साथियों को वहीं छोड़ खिसक गया। वास्तव में स्वामी जी का भाषा एवं शास्त्र का ज्ञान इतना था कि छोटा-मोटा पंडित इनके सामने ठहर ही नहीं सकता था।

यह कहा जाता है कि नन्दराम चौसी गाँव छोड़ गया और वहाँ चक्रांकित मत समाप्त हो गया।

जहाँगीराबाद में ओंकारदास नामक रईस अच्छा व्यायाम करने वाला था। एक दिन स्वामी जी के बल की परीक्षा लेने के लिए वह आया और स्वामी जी के पाँव दबाने लगा। पाँव दबाते हुए उसने पाँव को उँगलियों से दबाने में पूरा जोर लगा दिया, परन्तु जब स्वामी जी अकड़े तो उनकी टाँग लोहे के छड़ की भाँति सुदृढ़ हो गई और वह उनको उँगलियों से दबा नहीं सका और लज्जित होकर उठकर चल दिया।

खन्दोई में एक अन्य घटना घटी। इस गाँव में एक छत्रसिंह नामक जाट था। वह नवीन वेदान्त पर वार्तालाप करता हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहने लगा, "स्वामी जी, आप जो चाहे कहें, परन्तु सत्य यही है कि जगत् मिथ्या है।" स्वामी जी बहुत समझा चुके थे, छत्रसिंह मानता नहीं था। इस पर स्वामी जी ने एक चपत उसके मुख पर लगाकर कहा, "बताइये, यह चपत किसने किसको लगाई है ?"

छत्रसिंह को ज्ञान हो गया कि सब कुछ एक नहीं है।

रामघाट में कृष्णानन्द नामक एक वाममार्गी से स्वामी जी का शास्त्रार्थ हो गया। वाममार्गी शिवलिंग की उपासना करते हैं। स्वामी जी ने पूछा कि शिव कैलाश पर है या मन्दिर में ?

"दोनों स्थानों पर। वे तो सर्वव्यापक हैं।"

"तो फिर मन्दिर की क्या आवश्यकता है ? मैं भी तो शिव हो गया।"

इस उक्ति का जनसाधारण पर बहुत प्रभाव पड़ा। लोगों ने शिवलिंग गंगा में प्रवाहित करने आरम्भ कर दिये।

बुलन्दशहर में रतिराम नामक पहलवान स्वामी जी की बल परीक्षा के लिए आया। उसने आते ही कहा, "अरे ! यह बाबा तो बड़ा हृष्टपुष्ट है।"

स्वामी जी ने केवल उसकी ओर घूरकर ही देखा था। वह उनके चरण स्पर्श कर चल दिया।

: ४ :

कर्णवास में एक घटना और घटी। स्वामी जी वहाँ पर द्वितीय बार पहुँचे थे। उस समय दशहरे का स्नान-पर्व समीप था। समीपवर्ती ग्राम बरेली का ठाकुर कर्णसिंह अपने साथियों सहित स्नान के लिये वहाँ आया हुआ था। सभा में पहुँच वह ऊँची आवाज में पूछने लगा, "ए बाबा ! हम कहाँ बैठें ?"

"जहाँ आपकी इच्छा हो।" स्वामी जी ने कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

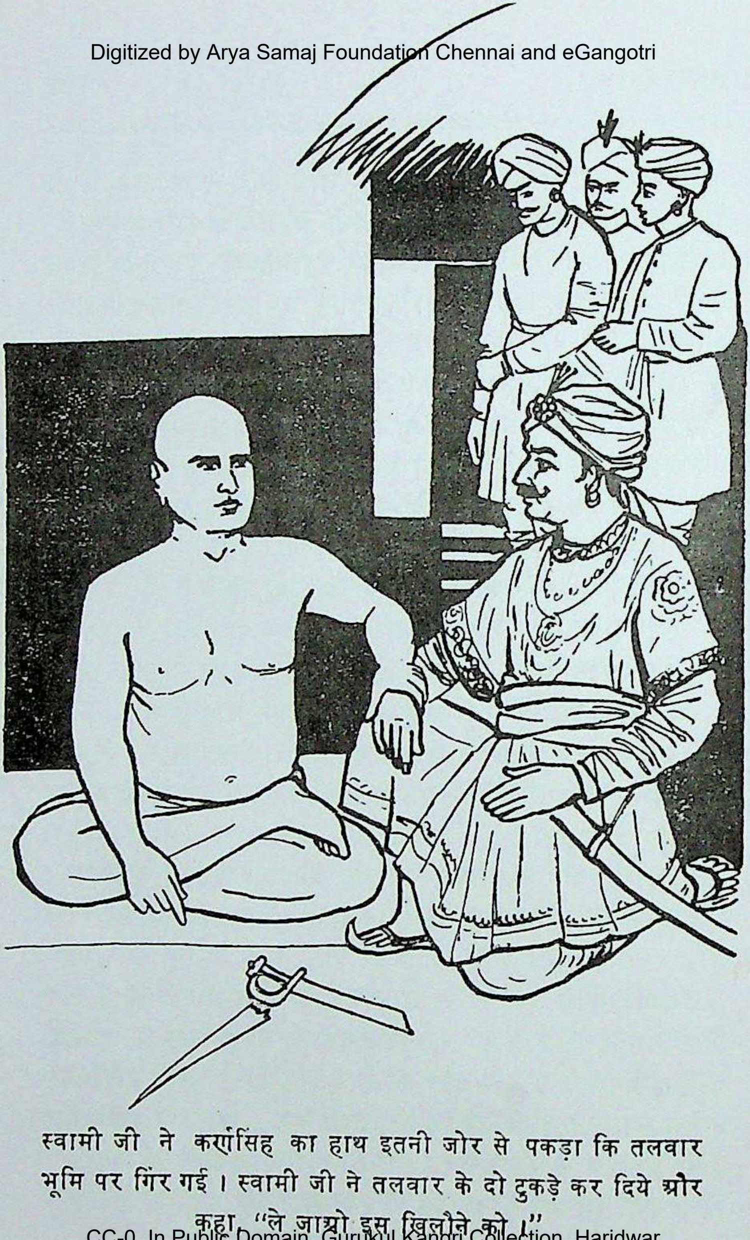

स्वामी जी ने कर्णसिंह का हाथ इतनी जोर से पकड़ा कि तलवार भूमि पर गिर गई। स्वामी जी ने तलवार के दो टुकड़े कर दिये और कहा, "ले जाओ इस खिलौने को।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हम तो जहाँ तुम बैठे हो, वही बैठेंगे।"

स्वामी जी थोड़ा खिसक गये और अपनी चटाई पर उसको जगह दे दी। ठाकुर पूछने लगा, "गंगा स्नान को नहीं गये ?"

"स्नान करने से क्या होगा ? मुक्ति तो भले कर्मों से होगी। इस जल में स्नान करने से कुछ नहीं होगा।"

"अच्छा, रामलीला देखोगे ?"

"अपने बड़ों का स्वांग रचकर तुम क्षत्रियों को लज्जा नहीं आती ?"

इस पर ठाकुर को क्रोध चढ़ आया और वह अपनी तलवार निकाल बैठा। स्वामी जी ने उसका हाथ इतनी जोर से पकड़ा कि तलवार भूमि पर गिर गई। स्वामी जी ने तलवार उठा उसके दो टूक कर ठाकुर से कहा, "लो, ले जाओ इस खिलौने को।"

कर्णसिंह लज्जित-सा चुपचाप सभा से बाहर निकल गया।

सभासदों ने स्वामी जी से कहा कि इसकी थाने में रपट लिखानी चाहिये। परन्तु स्वामी जी ने कहा, "वह अपने क्षात्र धर्म को निभा नहीं सका। तो क्या हम भी अपने ब्राह्मणत्व से पतित हो जायें ? यदि बुद्धिमान होगा तो इतनी-सी बात से ही समझ जायेगा।"

कर्णसिंह ने कुछ हत्यारों को स्वामी जी की हत्या के लिये भेजा। परन्तु वे स्वामी जी के डील-डौल को देख कर ही भाग गये।

कानपुर में शास्त्रार्थ हुआ। यद्यपि मध्यस्थ ने निर्णय दिया कि स्वामी दयानन्द ने यह सिद्ध कर दिया है कि वेद में मूर्ति पूजा का विधान नहीं है, परन्तु विपक्षी यह घोषणा करते चले गये कि पण्डित हलधर जीत गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस शास्त्रार्थ की सूचना काशी जी में पहुँची तो स्वामी जी की वहाँ पर प्रतीक्षा होने लगी। स्वामी जी काशी पहुँचे तो कार्तिक शुक्ला १२, सम्वत् १९२३, तदनुसार १६ नवम्बर सन् १८६६, मंगलवार का दिन शास्त्रार्थ के लिये निश्चय हो गया।

महाराज काशी नरेश ने स्वामी जी का आतिथ्य करना स्वीकार किया, परन्तु जब उन्हें पता चला कि वे मूर्ति पूजा का खण्डन करते हैं तो रुष्ट हो गये। महाराज नित्य मिट्टी का शिव-लिंग बनाते थे और उसका पूजन करते थे। स्वामी जी को पता चला तो उन्होंने महाराज पर व्यंग्य कसा, "यह आप कुम्हार का काम किस लिये करते हैं ?"

इस पर काशी के नरेश स्वामी जी के विरोधी हो गये। काशी का विख्यात शास्त्रार्थ, काशी नरेश के प्रयत्नों से स्वामी दयानन्द को जिस किस प्रकार से भी हो, पराजित करने के लिये किया गया था। महाराज स्वयं शास्त्रार्थ में उपस्थित थे।

शास्त्रार्थ आनन्दोद्यान में हुआ। लगभग ५० हजार श्रोतागण उपस्थित थे। स्वामी दयानन्द के विपक्ष में शास्त्रार्थ करने वाले पण्डितों की संख्या सत्ताईस थी और स्वामी जी अकेले थे।

शास्त्रार्थ का पूर्ण विवरण छपा हुआ मिलता है। और उसका साराँश इस प्रकार है। सर्वप्रथम पण्डित ताराचन्द नैयायिक सामने आये तो स्वामी जी ने पूछा, "क्या आप वेदों को मानते हैं ?"

"हाँ, सब वर्णाश्रम-धर्मी वेद को प्रामाणिक मानते हैं।"

"वेद में पाषाण आदि की मूर्तियों के पूजन का यदि विधान है तो प्रमाण दीजिये अन्यथा अप्रामाणिकता स्वीकार कीजिये।"

"वेद के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थ भी तो प्रमाण हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पहले वेद की बात का निश्चय हो जाय, बाद में अन्य ग्रन्थों के विषय में बात कर लेंगे। मुख्य प्रमाण वेद हैं। अन्य ग्रन्थ गौण हैं। इस कारण यदि वेद में इस विषय में कुछ नहीं तो मूर्तिपूजा नहीं करनी चाहिये।"

इस पर स्वामी विशुद्धानन्द ने आगे आकर कहा, "रचना की अनुपपत्ति—असिद्धि होने से अनुमान द्वारा वर्णित प्रधान, जगत् का कारण नहीं है। व्यास के इस सूत्र को वेद-मूलक सिद्ध कीजिये।"

"यह बात उपस्थित वाद के साथ सम्बन्ध नहीं रखती।"

"तो क्या हुआ ? यदि आपको इसका समाधान आता है तो बताइये।"

"इसका पूर्वापर पाठ देखकर समाधान किया जा सकता है।"

"यदि सब कुछ स्मरण नहीं तो काशी में शास्त्रार्थ करने के लिये आये ही क्यों हैं ?'"

"क्या आपको सब कुछ स्मरण है ?"

"हाँ, हमको सब कुछ स्मरण है।"

"तो बताइये, धर्म के कितने लक्षण हैं ?"

"वेद में कहे सहित फल सहित कर्म ही धर्म है।"

"यह तो आपका कथन है, कोई शास्त्रीय प्रमाण दीजिये।"

"धर्म का लक्षण प्रेरणा कहा गया है।"

"यह तो ठीक, परन्तु प्रेरणा कहते हैं श्रुति स्मृति की आज्ञा को। श्रुति स्मृति की आज्ञा में धर्म के लक्षण बताइये।"

'धर्म का एक ही लक्षण है।"

"शास्त्र में धर्म के दस लक्षण बतायें हैं।"

"कहाँ, ऐसा लिखा है ?"

"धृति क्षमा दमोऽस्तेयं..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशुद्धानन्द मौन हो गये।

तब बाला शास्त्री कहने लगे, "धर्म शास्त्र का अध्ययन मैंने किया है। इस विषय में हमसे पूछिये।"

स्वामी जी ने कहा, "आप अधर्म के लक्षण बताइये।"

बाला शास्त्री भी चुप हो गये।

इस पर सब पण्डित चिल्लाने लगे, "वेद में प्रतिमा शब्द है या नहीं ?"

स्वामी जी ने कहा, "वेद में प्रतिमा शब्द तो है परन्तु वह पूजा के सम्बन्ध में नहीं है।"

"तो किस प्रकरण में है ?"

"प्रतिमा शब्द यजुर्वेद के ३२वें अध्याय के तीसरे मन्त्र में है। यह सामवेद के ब्राह्मण में भी है। परन्तु यहाँ पाषाणादि के पूजन का द्योतक नहीं। इसलिये मैं इसका खण्डन करता हूँ।"

इस पर स्वामी जी ने मन्त्र की विस्तार से व्याख्या कर दी।

तब इधर-उधर के प्रश्न होने लगे। अब फिर विशुद्धानन्द ने पूछ लिया, "वेद कैसे उत्पन्न हुए ?"

"वेद का प्रकाश ईश्वर ने किया।"

"किस ईश्वर ने किया ?"

"क्या आप अनेक ईश्वर मानते हैं।"

"ईश्वर तो एक ही है परन्तु वेद के प्रकाशक ईश्वर के लक्षण बताइये।"

"उसका लक्षण सच्चिदानन्द है।"

"ईश्वर और वेद में क्या सम्बन्ध है ?"

"कार्य कारण का।"

"जैसे मन में और सूर्यादि में ब्रह्म बुद्धि करके उपासना कही है, वैसे शालिग्राम आदि में ईश्वरभावना करके पूजन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या हानि है ?"

इस समय मध्याचार्य जी बोल पड़े, "उद्बुध्यस्वाग्ने मूर्ते। "इस मूर्त से मूर्ति का आयोजन क्यों नहीं लेते ?"

"मूर्त पूर्ति का वाचक है मूर्ति का नहीं।"

इस प्रकार चार घंटे तक वार्त्तालाप चलता रहा। सब पण्डित बारी-बारी से निरुत्तर हो गये। अनेक विषयों पर वार्त्तालाप हुआ। पण्डित वर्ग कोई प्रमाण मूर्ति पूजा के पक्ष में नहीं दे सका। इस पर स्वामी जी से वंचना खेली गई। एक पण्डित वामनाचार्य, किसी पुस्तक के दो पुराने पन्ने जो अत्यन्त अस्पष्ट लिखे हुए थे, निकाल कर ले आये और कहने लगे कि ये वेद के पृष्ठ हैं। इनमें लिखा है – यज्ञ समाप्तौ सत्यां दशमें दिवसे पुराण-पाठं शृणुयात्। अर्थात् यज्ञ समाप्ति के दसवें दिन पुराणों का श्रवण करें।"

स्वामी जी ने कहा, "पढ़ कर सुनाइये।"

विशुद्धानन्द ने पन्ने वामनाचार्य से लेकर स्वामी जी की ओर कर दिये और कहा, "आप ही पढ़ लीजिये।"

स्वामी जी ने कहा, "आप ही पढ़िये।" इस पर विशुद्धानन्द कहने लगा, "मैं चश्मे के बिना नहीं पढ़ सकता। आप ही पढ़िये।"

स्वामी जी ने पन्ने ले लिये और पढ़ने का यत्न करने लगे। लिखावट अत्यन्त अस्पष्ट थी और अँधेरा हो गया था। इस कारण स्वामी जी को पढ़ने में कुछ समय लगा। अभी दो मिनट से अधिक समय नहीं हुआ था कि सभी लोग "दयानन्द पराजित" की घोषणा करते हुए उठ खड़े हुए।

इस शास्त्रार्थ का विवरण अत्यन्त विस्तार से लिखा मिलता है। इस प्रकार का शास्त्रार्थ पौराणिक पण्डितों ने पुनः करने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहस नहीं किया। पौराणिक पण्डितों ने घोषणा कर दी थी कि दयानन्द पराजित हुए हैं परन्तु इस शास्त्रार्थ के उपरान्त भारत भर में स्वामी दयानन्द की विद्वत्ता की धूम मच गई थी। इसके पश्चात् पौराणिक पण्डित स्वामी जी से शास्त्रार्थ के लिये पुनः आगे नहीं आये।

: ५ :

महर्षि दयानन्द एक मास तक उस काशी नगर में रहे, परन्तु पुनः वैसा आयोजन नहीं हुआ। इक्के-दुक्के विद्वान स्वामी जी से विभिन्न विषयों पर वार्त्तालाप करने के लिये आते रहे और स्वामी जी निरन्तर मूर्ति पूजा का खण्डन करते रहे। उस शास्त्रार्थ के बाद काशी नरेश के व्यवहार में भी अन्तर आता प्रतीत होने लगा था।

मूर्ति पूजा के विषय में एक स्वामी निरंजनानन्द ने अपना मत काशी नरेश के समक्ष कह दिया। ये स्वामी जी भी शास्त्रार्थ में उपस्थित थे। स्वामी निरंजनानन्द का मत था कि मूर्ति पूजा वेदों में उल्लिखित नहीं है। हाँ, यह लोकरीति चली आई है।

स्वामी दयानन्द जी काशी से पुनः पश्चिम् की ओर चले। इन दिनों स्वामी जी का विचार कुछ बातों पर स्थिर हो गया था। वे समझ गये थे कि ब्राह्मण और पुजारियों का स्वार्थ शास्त्रार्थ को वितण्डावाद में परिणत कर देता है। इस कारण जनता से सम्पर्क बनाना चाहिए। इस प्रयोजन से उन्होंने अपना हिन्दी भाषा का ज्ञान बढ़ाना आरम्भ कर दिया। वे अपने विचार एक पुस्तक के रूप में लिख देना चाहते थे और एतदर्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' नाम से एक पुस्तक संस्कृत में लिख भी रहे थे। अब उन्होंने इस पुस्तक को हिन्दी भाषा में अनूदित करने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयत्न किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ वेद ज्ञाता पण्डित तैयार करने के लिए कहीं-कहीं वेद विद्यालय खोलने का भी यत्न किया।

काशी, प्रयागराज, मिर्जापुर इत्यादि स्थानों पर अपने मंतव्य का प्रकाश करते हुए वे जा रहे थे। मिर्जापुर के बाबा बालकृष्ण ने महाभारत की टीका लिखी थी और उसमें उन्होंने भगवद् गीता का प्रक्षिप्त बताया था। स्वामी दयानन्द ने इस बात को गलत बताया और बाबा जी की टीका में कई अन्य दोष बताये। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्वामी जी महाभारत और गीता को भी प्रामाणिक ग्रन्थ मानते थे।

स्वामी जी का योग और तपोबल अति प्रबल था। मिर्जापुर में भी मूर्ति पूजा का खण्डन होता रहा था। यहाँ पर एक शास्त्रार्थ में भगवान कृष्ण को परमात्मा का अवतार और उसकी भक्ति प्रमाणित सिद्ध करने के लिए गीता के श्लोक— "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।" पर बात आ गई। इस श्लोक के अर्थ हैं—"हे अर्जुन ! तू सब धर्मों को छोड़ कर मेरी शरण में आ जा और मैं तुझे मोक्ष प्राप्त करा दूँगा।"

इस पर स्वामी जी बताया कि इसका अर्थ है कि सब अधर्मों को छोड़कर। उन्होंने बताया कि व्याकरण के एक नियम से यहाँ सर्व का आकार अधर्मान् के अकार का रूप हो गया है।

मिर्जापुर में कई बार स्वामी जी पर गुण्डों द्वारा आक्रमण का प्रयास हुआ, परन्तु जब स्वामी जी उनसे लड़ने के लिए तैयार होते तो वे भाग जाते थे। मिर्जापुर में प्रथम वैदिक पाठशाला खुली। कुछ काल तक वह चली, परन्तु धनाभाव के कारण चल नहीं सकी।

इन दिनों स्वामी जी अंग्रेज़ी का अभ्यास भी करने लगे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही वे कुरान और अंजील भी सुनने लगे।

मिर्जापुर से स्वामी जी संवत १६२६ में कलकत्ता पहुँचे। वहाँ इनका सम्पर्क ब्रह्म समाजियों से आया। बाबू केशवचन्द्र सेन से उनकी भेंट हुई। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर से भी वे मिले और दोनों से शास्त्र-चर्चा होती रही। ये दोनों कलकत्ता के विख्यात सुधारक थे। स्वामी जी उनके जाति सुधार कार्य से सर्वथा सहमत थे, परन्तु उनकी घोषणा कि इस्लाम और ईसाई मत भी सत्य मत हैं, इससे वे मतभेद रखते थे।

बाबू केशवचन्द्रसेन से स्वामी जी की चर्चा इस बात पर होती रही कि वेद ही क्यों परमात्मा का ज्ञान माने जावें ? कुरान और बाइबल भी क्यों न इलहाम की पुस्तकें मान ली जायें ? स्वामी जी ने अपने मत के समर्थन में कई युक्तियाँ दीं जिनमें एक युक्ति यह थी कि बाइबल और कुरान कथा कहानियाँ हैं।

स्वामी जी बंगाल के प्रसिद्ध नेताओं से मिलते, वार्त्तालाप करते और कुछ के साथ शास्त्रार्थ भी करते रहे। इन दिनों स्वामी जी एक कौपीन ही पहनते थे और शरीर पर भस्म रमाते थे। यहाँ बाबू केशवचन्द्रसेन जी के कहने पर मिलने वालों लोगों के आने पर वे वस्त्र धारण करने लगे।

कलकत्ता में स्वामी जी की तब के वायसराय से भेंट हुई थी। यह सम्वत् १६३० की बात है। सन् जनवरी १८७३ में कलकत्ता स्थित लार्ड बिशप चर्च आफ इंग्लैण्ड, स्वामी जी को ले कर वाइसराय लार्ड नार्थ ब्रुक के पास गये। वार्त्तालाप द्विभाषिय के द्वारा हुआ।

यह वार्त्तालाप स्वामी जी के राजनीतिक विचारों की धुरी प्रकट करता है। ईसाई पादरी स्वामी जी के मूर्तिपूजा खण्डन इत्यादि से यह समझ रहे थे कि स्वामी जी हिन्दू जनता का विश-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास पौराणिक धर्म से ढीला कर रहे हैं। उनका विचार था कि इस प्रकार हिन्दू लोगों का अपने धर्म कर्म से विश्वास उठ जावेगा और वे शीघ्र ही ईसाई मत को स्वीकार कर लेंगे। इस कारण यत्र-तत्र ईसाई पादरी स्वामी जी से मिलते रहते थे। इसी सम्बन्ध में भारत स्थित सबसे बड़े अंग्रेज पादरी स्वामी जी को वायसराय हिन्द के पास ले कर गये थे। परन्तु वहाँ वार्त्तालाप का विषय दूसरा हो गया।

लार्ड नार्थब्रुक ने यह घटना अपनी साप्ताहिक डायरी में प्रधानमन्त्री और इंग्लैंड के सैक्रेट्री आफ स्टेट को लिखी। इसमें वायसराय ने यह भी लिखा कि उसने इस बागी फकीर की कड़ी निगरानी के लिये गुप्तचर नियुक्त करने का आदेश दे दिया है।

वायसराय की डायरी में जो लिखा था, उसका अनुवाद इस प्रकार है—"औपचारिक शिष्टाचार के उपरान्त वाइसराय ने स्वामी जी से पूछा, पण्डित दयानन्द ! मुझे सूचना मिली है कि आप द्वारा दूसरे मत-मतान्तरों व धर्मों की कड़ी आलोचना उन धर्मों के मानने वालों के मन में क्षोभ उत्पन्न करती हैं और आपके विरुद्ध भयानक विचार उत्पन्न करती है। विशेष रूप में मुस्लिम और ईसाई जनता के। क्या आप अपने शत्रुओं से किसी प्रकार का भय अनुभव करते हैं ? अर्थात् क्या आप सरकार से अपनी सुरक्षा का कोई प्रबन्ध चाहते हैं ?"

स्वामी दयानन्द ने उत्तर दिया, "मुझे अपने विचारों के प्रचार करने की अंग्रेज़ी राज्य में पूरी स्वतन्त्रता है। मुझे व्यक्तिगत रूप में किसी प्रकार का खतरा नहीं है।"

"यदि ऐसा ही है तो क्या आप अपने देश में अंग्रेजी शासन द्वारा उपलब्ध उपकारों का भी वर्णन किया करेंगे ? और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेरा दृढ़ विश्वास है कि मेरे देशवासियों को, अबाध राजनैतिक उन्नति और संसार के राज्यों में समानता का दर्जा पाने के लिए शीघ्र पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।' — स्वामी दयानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने व्याख्यानों के आरम्भ में, जो ईश्वर प्रार्थना आप किया करते हैं, उसमें देश पर अखण्ड अंग्रेज़ी शासन के लिए प्रार्थना भी किया करेंगे ?"

"मैं ऐसी किसी बात को मानने में असमर्थ हूँ क्योंकि यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि मेरे देशवासियों को, अबाध राजनीतिक उन्नति और संसार के राज्यो में समानता का दर्जा पाने के लिए शीघ्र पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। मैं ईश्वर से नित्य प्रातः सायं, से इस देश की, विदेशियों की दासता से मुक्ति की ही प्रार्थना करता हूँ।"

यह उस काल की बात है जब अभी १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के बाद देश के राजा महाराजा एवं नेतागण अंग्रेजी राज्य के गुणानुवाद गाते नहीं थकते थे।

इस भट के बाद स्वामी जी मरणपर्यन्त राष्ट्रीयता का प्रचार करते रहे। वे चाहते थे कि देश में एक राष्ट्र हो। देश स्वतन्त्र हो और भूमण्डल के अन्य उन्नत राष्ट्रों में अपना स्थान पाये। अपनी पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' में स्थान-स्थान पर स्वामी जी ने स्वराष्ट्र, स्वराज्य और विदेशियों से मुक्ति के विषय में लिखा भी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय अध्याय

: १ :

कलकत्ता में स्वामी जी का विचार जनसाधारण से सम्पर्क उत्पन्न करने का बन गया। यह स्वामी जी के जीवन का तृतीय दौर था। अब वे हिन्दी भाषा में व्याख्यान और चर्चा करने लगे थे। इसके साथ ही वे अपने विचारों के अनुसार वैदिक साहित्य का निर्माण करने लगे थे। इसी दिशा में उन्होंने छोटे-बड़े कई ग्रन्थ लिखे। सत्यार्थ प्रकाश का हिन्दी रूपान्तर छपवाया, ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका लिखी और वेद भाष्य लिखना आरम्भ कर दिया। यजुर्वेद भाष्य पूर्ण किया और ऋग्वेद का कुछ अंश किया। अकाल मृत्यु के कारण ऋग्वेद को वे पूर्ण नहीं कर सके। और भी कई छोटे-मोटे ग्रन्थ उन्होंने लिखे यथा 'गोकरुणा-निधि' 'व्यवहारभानु' इत्यादि।

स्वामी जी ने जनसाधारण से सम्पर्क बनाने के लिए और उनमें सीधा वेद धर्म का प्रचार करने के लिए आर्य समाज की स्थापना की। जनता में संस्कारों की महिमा बनाये रखने के लिए उन्होंने 'संस्कार विधि' लिखी।

महर्षि स्वामी दयानन्द के शेष जीवन की कथा लिखने से पूर्व यह उपयुक्त होगा कि यहाँ पर हम उनकी दो मुख्य पुस्तकों के लिखने का आशय जैसा कि नाम से प्रकट होता है, वर्णन कर दें। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में वेद भाष्य करने का कारण उन्होंने वर्णन किया है। हम ऊपर लिख चुके हैं कि उस समय भारतवासियों में सायण और महीधर के वेद-भाष्य प्रचलित थे। इनके अतिरिक्त जर्मन और अंग्रेज विद्वानों ने भी वेदों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर भाष्य लिखे थे। इनमें मक्समूलर और ग्रिफिथ विख्यात हैं। इन भाष्यों की विद्यमानता में स्वामी जी ने जब भाष्य आरम्भ किया तो उन्होंने अपने भाष्य करने के कारण पर भी प्रकाश डाला।

स्वामी जी लिखते हैं—"सायण और महीधर आदि ने भाष्य बनाये हैं। वे सब मूलमन्त्र और ऋषिकृत व्याख्यानों के विरुद्ध हैं। मैं वैसा भाष्य नहीं लिख रहा। उन्होंने वेदों की सत्यार्थता और अपूर्वता कुछ भी नहीं जानी और जो यह मेरा भाष्य है सो तो वेद, वेदांग, एतरेय, शतपथ ब्राह्मणादि ग्रन्थों के अनुसार होगा। क्योंकि जो वेद के सनातन व्याख्यान हैं, उनके प्रमाणों से युक्त बनाया है। यही इसकी अपूर्वता है। क्योंकि जो प्रमाण-अप्रमाण विषय में वेदों से भिन्न शास्त्र गिन आये हैं वे सब वेदों के व्याख्यान हैं। वैसे ही ग्यारह सौ सत्ताईस वेदों की शाखा भी उनके व्याख्यान ही हैं। उन सब ग्रन्थों के प्रमाणों से युक्त यह भाष्य बनाया जा रहा है।

"और दूसरा इसके अपूर्व होने का कारण यह है कि इसमें कोई बात अप्रमाण व अपनी रीति से नहीं लिखी जा रही। जो जो भाष्य, सायण महीधर आदि ने लिखे हैं, वे सब मूलार्थ और सनातन वेद व्याख्यानों से विरुद्ध हैं। तथा जो जो इस नवीन भाषाओं के अनुसार अंग्रेज़ी, जर्मनी, दक्षिणी और बंगाली आदि भाषाओं में व्याख्यान बने हैं, वे भी अशुद्ध हैं।"

स्वामी दयानन्द ने अपनी 'ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका' में अप्रमाणित भाष्यों के उदाहरण देकर भी बताने का यत्न किया है कि उनका भाष्य इन सबसे श्रेष्ठ है। उनका मत है कि वेदों में मानव व्यवहार के विषय पर विशेष लिखा गया है। यथा कर्म, पुनर्जन्म, विवाह, नियोग, राजा, प्रजाधर्म इत्यादि विषयों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का वेदों में होना लिखा है।

स्वामी जी का वेद भाष्य उनकी अकाल मृत्यु हो जाने के कारण सम्पूर्ण नहीं हो सका। इसमें सन्देह नहीं कि पूर्ण होने पर यह भाष्य अद्वितीय होता। ऐसा अनेक विद्वानों का मत है।

स्वामी जी की दूसरी उल्लेखनीय पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' है यह पुस्तक आर्य समाज संस्था जो स्वामी दयानन्द ने अपने ढंग से वेद प्रचार के लिए स्थापित की थी, का पथ-प्रदर्शक बन गई है। जैसे ईसाई मतावलम्बियों के लिए बाइबल है अथवा मुसलमानों के लिए कुरान है, वैसे ही आर्य समाजियों के लिए 'सत्यार्थ प्रकाश' माननी चाहिए। सत्यार्थ प्रकाश और कुरान इत्यादि पुस्तकों में अन्तर यह है कि जहाँ कुरान इत्यादि का मत पूर्व के प्रचलित मतों से सर्वथा असम्बद्ध है, वहाँ सत्यार्थ प्रकाश स्पष्ट शब्दों में बताता है कि यह वेद के सत्य अर्थों को बताने के लिए है। स्वामी दयानन्द यह सत्यार्थ प्रकाश में ही लिख गये हैं कि मेरे वचनों अथवा लेखों में जहाँ भी कोई बात वेद विरुद्ध दिखाई दे, वह न मानी जाय। स्वामी जी वेदों को भगवान का वाक्य और उनको निर्भ्रान्त सत्य ज्ञान की पुस्तक मानते थे। इस कारण वे कहते थे कि सत्यार्थ प्रकाश वेद के सत्य अर्थों का प्रकाश करन के लिये लिखी गई पुस्तक है।

सत्यार्थ प्रकाश में १४ प्रकरण हैं। उनका नाम समुल्लास रखा गया है। इनमें से प्रथम १० समुल्लासों में तो वेदानुसार मानव जीवन में करने योग्य भिन्न-भिन्न कार्यों का वर्णन है।

इन दस समुल्लासों में अपने विचार से वेद मत का प्रतिपादन कर, स्वामी जी ने देश में प्रचलित मतमतान्तरों का खण्डन भी किया है। यह खण्डन ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें और चौदहवें समुल्लासों में है। ग्यारहवें समुल्लास में आर्यवर्तीय मत-मतान्तरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का खण्डन-मण्डन है। बारहवें में चार्वाक, बौद्ध और जैन मतों का खण्डन-मण्डन है। तेरहवें में ईसाई मत का और चौदहवें में इस्लाम मत का खण्डन है।

जहाँ तक अपने मत के प्रतिपादन का विषय है, स्वामी जी ने उसका आधार वेद और उन प्रमाणित ग्रन्थों को माना है जिनका उल्लेख हम पिछले परिच्छेद में कर आये हैं। आर्यवर्तीय मतान्तरों का खण्डन-मण्डन भी वेद और उक्त ग्रन्थों के आधार पर ही किया है। हाँ, जैन, बौद्ध, ईसाई और इस्लाम के खण्डन में केवल युक्ति को ही आधार लिया है। इन मतों में वेद को प्रमाणित और ईश्वरीय ग्रन्थ नहीं माना जाता। अतएव इन मतों के विषय में लिखते समय वेद को आधार बनाने का कोई लाभ नहीं था। अतः इन मतों को अयुक्ति संगत ही सिद्ध करने का यत्न किया गया है।

अपने मत के प्रतिपादन में स्वामी जी ने जहाँ वेद में से प्रमाण दिये हैं, वहाँ मनुस्मृति में से भी बहुत से प्रमाण दिये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी दयानन्द जी की, मनुस्मृति पर बहुत आस्था थी।

स्वामीजी कृष्ण को ईश्वर का अवतार नहीं मानते थे। गीता का श्लोक ४-७ कि जब जब धर्म की हानि होती है, वे धर्म के अभ्युदय के लिये जन्म लेते हैं—इस विषय में स्वामी जी कहते हैं—"यह बात वेद विरुद्ध होने से प्रमाण नहीं। और ऐसा हो सकता है कि श्री कृष्ण धर्मात्मा और धर्म की रक्षा करना चाहते थे। 'मैं श्रेष्ठ पुरुषों की रक्षा और दुष्टों का नाश करने के लिये युग-युग में जन्म लेता हूँ, इसमें कुछ दोष नहीं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थामधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।। गी० ४-७ ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि 'परोपकाराय सतां विभूतयः।' परोपकार के लिये सत्पुरुषों का तन, मन और धन होता है। तथापि इससे कृष्ण ईश्वर नहीं हो सकते।

: २ :

स्वामीजी की तत्परता के कई प्रमाण मिलते हैं। उत्तर देने में सतर्क और विचार कर तुरन्त कार्य करने में वे तत्पर रहते थे।

एक दिन, जब वे दूसरी बार काशीजी में गये, तो एक राम-स्वामी नामक गर्वीले पण्डित उनके पास पहुँचे। उन्होंने स्वामी जी से शास्त्रार्थ की यह शर्त रखी कि एक छुरी रख ली जाय और जो पराजित हो उसकी नाक काट ली जाय। स्वामी जी ने सतर्कता से उत्तर दिया, "एक नहीं दो रखनी चाहियें। दूसरी जिह्वा काटने के लिये हो।"

राम स्वामी स्वामी दयानन्द की निर्भीकता देख कर भाग खड़ा हुआ।

एक अन्य दिन की बात है। कुछ मुसलमानों ने स्वामी जी को गंगा तट पर एकान्त में ध्यानावस्थित बैठे देख लिया। स्वामी जी ने वहाँ इस्लाम का भी खण्डन किया था। मुसलमान स्वामी जी को ध्यानावस्थित देख उनको उठा गंगा जी में बहा देने का विचार करने लगे। दो हृष्ट-पुष्ट मुसलमान स्वामी जी को बगलों से उठा कर गंगा में फेंकने लगे। स्वामी जी ने बगलें दबा लीं। उठाने वालों के हाथ ऐसे फँसे कि वे छूट नहीं सके। जब स्वामी जी को गंगा में फेंका गया तो वे भी साथ ही गंगा जी में लुढ़क डुबकियाँ लेने लगे। स्वामी जी तो डुबकी लगा नदी के पार चले गये और वे गंगा जी में गोते खाते रहे।

एक मनुष्य स्वामी जी के लिये पान में विष डाल कर लाया। स्वामी जी भोजनोपरान्त पान ले लिया करते थे। वे उस दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पान ले चुके थे। स्वामी जी ने कह दिया कि वे पान ले चुके हैं और नहीं लेना चाहते। इस पर वह मनुष्य आग्रह करने लगा। स्वामी जी को सन्देह हो गया। उन्होंने पान लेकर खोल दिया। उसमें कोई संदिग्ध वस्तु पड़ी देख स्वामी जी ने पूछा, "यह क्या है ?"

स्वामी जी का प्रश्न सुनते ही पान लाने वाला भाग खड़ा हुआ।

स्वामी जी से इन दिनों किसी ने पूछा, "महाराज ! अब तो आप वस्त्र धारण करने लगे हैं, और रेल से भी यात्रा करने लग गये हैं ?"

इसका कारण बताते हुए स्वामी जी ने कहा, 'जनता से सम्पर्क बनाने के लिये लोगों के घरों में जाने का निमंत्रण स्वीकार करना पड़ता है। वहाँ स्त्रियाँ भी सामने आती हैं। सभा-समितियों में व्याख्यान देने पड़ते हैं। इस कारण ऐसे स्थानों पर जाते समय वस्त्र पहिनना ठीक रहता है। अब पुस्तक रचना का कार्य कर रहा हूँ। इस कारण साथ में ग्रन्थ और लिखने को लेखनी, दवात और कागज़ भी रखने पड़ते हैं। अतः रेल में यात्रा करनी आवश्यक हो गई है।"

सम्वत् १९३१ में पहली बार कानपुर में स्वामी जी के सार्वजनिक व्याख्यान का प्रबन्ध किया गया। परेड के मैदान में शामियाना खड़ा किया गया और फर्श बिछाया गया। सभा-स्थल लोगों से भर गया। परन्तु पौराणिक पण्डितों और मुल्लाओं ने मिलकर थानेदार की सहायता से हल्ला मचा दिया। एक ओर एक पण्डित संस्कृत श्लोकों में और दूसरी ओर एक मुल्ला अरबी भाषा में हो-हल्ला करने लगे। सभा में पत्थर भी पड़ने लगे। इस कारण व्याख्यान नहीं हो सका। तदनन्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिवप्रसाद राजगद्दी हाल में ईश्वर सिद्धि पर व्याख्यान हुआ। यहाँ उसके बाद भी कई दिनों तक व्याख्यान होते रहे।

मथुरा में स्वामी जी के साथ एक घटना और घटी। स्वामी जी अपने निवासस्थान पर सार्वजनिक व्याख्यान दे रहे थे। इस समय एक ईसाई और एक कलवार मद्य बेचने वाला वहाँ आ गये और स्वामी जी से शराब, जो उन्होंने पी थी, का दाम मांगने लगे। स्वामी जी ने कह दिया, "व्याख्यान के बाद उसका दाम मिल जावेगा।"

व्याख्यान के बाद वे आये तो स्वामी जी ने दोनों को गर्दनों से पकड़ कर भिड़ा दिया। इससे भयभीत वे बक गये कि उनको किसने भेजा था।

मथुरा में हुल्लड़बाजी भी हुई और प्रचार भी हुआ। स्वामी जी का शारीरिक बल, ब्रह्मचर्य का ओज और उत्कृष्ट विद्वत्ता सदा उनके पक्ष में रहती थी। अब स्वामी जी जहाँ जाते, वहीं वेद विद्यालय खोलने का यत्न करते। कासगंज में, प्रयागराज में और फिर मथुरा में वेद विद्यालय खोले गये। परन्तु कहीं तो उपयुक्त अध्यापकों के अभाव में और कहीं विद्यार्थियों के न होने से और प्रायः धनाभाव के कारण विद्यालय बन्द हो गये।

स्वामी जी बम्बई गये तो वहाँ उन्होंने सम्वत् १९३२ में प्रथम आर्य समाज की स्थापना की।

नासिक के एक समाचार पत्र 'इन्दु प्रकाश' में स्वामी जी के विषय में एक समाचार छपा था। उस समाचार से स्वामी जी के उन दिनों के कार्य का पता चलता है। इन्दु प्रकाश में लिखा था—

"हमारे शास्त्रियों में न तो जिज्ञासा भाव ही है और न ही उन्हें सत्य के अनुसन्धान की रुचि है। इसलिये उनकी ओर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार सुस्थिर नहीं रहता। उनका ग्लानिद्योतक अथवा विचार-मूढ़ता सूचक मौन केवल यही प्रकट करता है कि वे पंडित दयानन्द के विश्वास और सुधारपरक विचारों को अच्छा नहीं समझते।

"पण्डित दयानन्द सच्चे मन से कपट द्वेषी हैं। उनके व्याख्यानों में वेदों के इतने उद्धरण होते हैं कि किसी लिखित निबन्ध में भी और अच्छे पुस्तकालय की सहायता से भी इतने वचनों को उद्धृत करना सहज नहीं है।......

"समस्त पुरुषों को उचित है कि हिन्दू समाज की उन्नति और हिन्दू प्रजा के अभ्युत्थान में पण्डित दयानन्द की उपासना के युक्ति-युक्त और विशुद्ध रूप को स्थापित करने में सहायता करें। इस स्थान के लोग उनकी निर्भीकता और दृढ़ता से इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने श्रोताओं के आह्लाद और साधुवाद के बीच दयानन्द को बहुमूल्य वस्त्र उपहार में दिये।"

स्वामी जी के मन्तव्यों का वर्णन भी किया गया। उनका संक्षेप इस प्रकार है—

१. जाति शब्द का प्रचलित अर्थ स्वामी जी नहीं मानते। यदि एक शूद्र पर्याप्त ज्ञान सम्पन्न है तो वह ब्राह्मण है और पापकर्मा ब्राह्मण शूद्र से भी नीच है।

२. मूर्तिपूजा के वे अदम्य शत्रु हैं।

३. विदेश यात्रा में हानि नहीं मानते।

४. पुनर्विवाह के पक्ष में हैं।

५. विदेशियों की हमने बुराइयाँ ही सीखी हैं। भलाई कोई नहीं सीखी। बिना विवाह के स्त्रियां रखना मुसलमानों से सीखा है। एकेश्वर की पूजा उनसे नहीं सीखी।

६. भिखमंगों से देश आप्लावित होने के कारण आर्थिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुरव्यवस्था में फँस गया है। वैरागी, गोसाईं, अघोरी और भिक्षुक यदि कृषक और श्रमजीवी बन जावें तो यह दुर्दशा दूर हो।

७. अंग्रेज ही आज प्रवृत्त अर्थ में ब्राह्मण है।

८. पण्डित स्वामी दयानन्द हास्य रस में भी प्रवीण है। उन्होंने एक वैष्णव के मस्तक पर सीधी काली रेखा का तिलक देखा तो कहने लगे—काली रेखा से यदि स्वर्ग मिलता हो तो अपना सारा मुख काला क्यों नहीं कर लेते ? स्वर्ग यात्रा सुगम हो जावेगी।

बम्बई में भी स्वामी जी को विष देने का यत्न किया गया। उनको मार डालने के लिये गुण्डे भी नियुक्त किये गये।

स्थान-स्थान पर स्वामी जी की हत्या का प्रयत्न इसी कारण प्रतीत होता है कि स्वामी जी निर्भीकता से मत-मतान्तरों का खण्डन करते थे और जिनके निहित स्वार्थों को इस खण्डन से हानि पहुँचती थी, वे स्वामी जी को मारने पर उद्यत हो जाते थे।

बम्बई में रहते हुए स्वामी जी की दिनचर्या ऐसी रहती थी। वे ब्रह्म मूहूर्त में तीन बजे उठते। कुल्ला कर जलपान तथा शौच स्नानादि से निवृत्त हो समाधिस्थ हो जाते। सूर्योदय पूर्व भ्रमणार्थ जाते। ८ बजे लौटते। २० मिनट विश्राम करते। फिर दूध पीकर ११ बजे तक लेखन कार्य करते। तदनन्तर स्नान भोजन और विश्राम तथा चार बजे तक लेखन कार्य। सांय ४ बजे से १० बजे तक भेंट, शंका समाधान, व्याख्यान इत्यादि। रात्रि को केवल दूध पीते और ठीक दस बजे शयन।

बम्बई से स्वामी जी पूना गये। यहां के सन् १८८७ के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हितेच्छु' में स्वामी जी के विषय में यह लेख मिलता है--

"इस समय पूना समाज के पुरातन पूजक अंश (पौराणिक दल) में दयानन्द के कार्यों के कारण उतना ही आन्दोलन मचा हुआ है, जितना ७ वर्ष पूर्व तव मचा था जव कि शंकेश्वर के शंकराचार्य के सभापतित्व में विधवा विवाह के शास्त्रविहित होने के प्रश्न पर विचार करने के लिये मचा था। पूना के पत्र दयानन्द और पंडितों की सीमाओं के वर्णन से भरे हुए हैं। शास्त्रियों ने नोटिस के रूप एक पत्र स्वामी जी को भेजा, जिसमें वे नियम लिखे हैं, जिनके अनुसार शास्त्री शास्त्रार्थ कर सकते हैं। यह पत्र स्वामी जी के पास एक असभ्य ढंग से भेजा गया। अतः उन्होंने इस पर ध्यान नहीं दिया। इस पर भी उन्होंने शास्त्रियों को सूचना दे दी है कि शास्त्रार्थ के जो भी नियम वे प्रस्तुत करें, उन्हें महादेव गोविन्द रानाडे और महादेव मोरेश्वर कुण्टे से स्वीकृति लेनी होगी। इसकी सम्भावना प्रतीत नहीं होती कि पूना के शास्त्री स्वामी जी के साथ खुले मैदान में शास्त्र-युद्ध करने का साहस करेंगे और यह प्रतीत होता है कि वे ओछी चालें ही चलते रहेंगे, जिससे उनका शास्त्रार्थ न करने का मनोरथ पूर्ण हो।"

पूना में स्वामी जी का भारी सत्कार हुआ। स्वामी जी का एक जलूस निकाला गया, तो विपक्षियों ने भी एक गधे का जलूस निकाला और गर्दभानन्द सरस्वतो की जयजयकार के नारे लगाये गये। दोनों जलूसों में आमना-सामना हुआ तो झगड़ा हो गया।

इस प्रदर्शन के उपरान्त पुलिस ने शान्ति स्थापित की और स्वामी जी ने सभा-स्थल पर पहुँच कर ही व्याख्यान दिया। स्वामी जी और उनके साथी अविचलित डटे रहे। व्याख्यान-गृह भरा हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उक्त झगड़े में चार व्यक्तियों पर मुकदमा चला। पुलिस ने धारा १५३ के अन्तर्गत मुकदमा चलाया और अपराधियों को तीन-तीन मास का कारावास तथा पाँच-पाँच सौ रुपये का जुर्माना हुआ। गर्दभ टोले वालों ने बहुत धन व्यय कर दोषियों को मुक्त कराने का यत्न किया। मैजिस्ट्रेट ने अपने निर्णय में इस प्रकार लिखा—

"यह बात चाहे सुनने में कठोर लगे, मेरा विश्वास है कि सारी पुलिस ब्राह्मणों के प्रभाव में थी .....पुलिस ने अपना कर्तव्य पालन नहीं किया और उनके ऐसा न करने के कारण स्पष्ट हैं। मैं यह अपना कर्तव्य समझता हूँ कि उनके व्यवहार को जिला मजिस्ट्रेट के ध्यान में लाऊँ......

"मुझको बताया गया है कि उक्त लोगों (गर्दभ के जलूस वालों) ने स्वामी जी से क्षमा-प्रार्थना कर ली है और उन पर मान-हानि का दावा नहीं किया गया।"

इन अभियुक्तों की अपील सेशनकोर्ट और हाईकोर्ट में भी की गई, पर दण्ड बहाल रहा।

पूना में भी आर्य समाज की स्थापना हुई।

: ३ :

इस समय तक महर्षि दयानन्द के मन में यह अंकित हो चुका था कि देश में परकीय राज्य ही बहुत से दोषों का कारण है। अतएव जब-जब इनको अवसर मिलता था ये देशवासियों को राजनैतिक मुक्ति प्राप्त करने के लिये प्रेरणा देते थे।

यह वे मानते थे कि स्वतन्त्रता की प्राप्ति तब तक नहीं होगी जब तक आर्य पुरुषों की निष्ठा देशीय धर्म, संस्कृति और सभ्यता में नहीं होगी। वे भारतवर्ष का उज्ज्वल काल महाभारत के काल तक ही मानते थे और उसी काल की श्रेष्ठता भारतीयों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न करना चाहते थे। स्वामी जी का दृढ़ मत था कि वेद मत ही परमात्मा का दिया धर्म तथा संस्कृति का निरूपण करता है, उसके बिना अन्य किसी में कल्याण नहीं।

अपने इसी उद्देश्य के लिये वे नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में घूम-घूम कर अपनी विद्वत्ता और योग्यता से लोगों का मार्ग-दर्शन करते रहे।

सम्वत् १९३३ में दिल्ली में दरबार बुलाया गया था। इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया की स्वर्ण जयन्ती थी और इस अवसर पर भारत के वायसराय लार्ड लिटन ने भारत में भी दरबार किया। भारत भर के नरेश, रईस और नेता यहाँ पधारे थे। स्वामी जी ने भी इस अवसर से लाभ उठा कर अपने विचार लोगों पर व्यक्त करने का निर्णय कर लिया। दिल्ली के दक्षिण की ओर अवध नरेशों के कैम्पों के समीप एक वन-वाटिका में स्वामी जी ने डेरा लगाया। यह वन-वाटिका शेरमल का अनारबाग नाम से प्रसिद्ध थी। बाग के बाहर मोटे अक्षरों में लिख दिया गया—स्वामी दयानन्द सरस्वती का निवास-स्थान।

स्वामी जी का इस दरबार में आने का मुख्य उद्देश्य भारत के राजा-रईसों में वेद की प्रतिष्ठा करना था। स्वामी जी समझते थे कि वेद मत की प्रतिष्ठा न रहने से ही इस देश के लोग विदेशियों की दासता में फँस गये हैं। इनको वेद मत का आश्रय लेना चाहिये।

स्वामी जी ने दिल्ली में पहुँच दिल्ली के सब कैम्पों में विज्ञापन छपवा कर बँटवा दिये और स्थान-स्थान पर इनको चिपकवा दिये कि सत्यासत्य निर्णय करने के लिए उपयुक्त अवसर है।

इस विज्ञापन का इतना प्रभाव तो हुआ कि जनसाधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलने के लिए भारी संख्या में आने लगा, परन्तु नरेशों में केवल महाराज तुकोजी राव होलकर से ही भेंट हो सकी। अन्य राजा-रईसों को दरबारदारी करने से अथवा खेल-तमाशा देखने से अवकाश ही नहीं मिला।

ऐसा समाचार था कि कश्मीर नरेश ने अपने मन्त्री नीलाम्बर बाबू को स्वामी जी के पास भेज भेंट का प्रबन्ध किया था, परन्तु बाद में किसी कारणवश यह भेंट न हो सकी।

स्वामी जी जब लाहौर गये तो कश्मीर के महाराजा ने उनको अपने राज्य में आने का निमन्त्रण दिया था, परन्तु बाद में तत्कालीन राज्य के धर्म शास्त्री (जज) पं० गणेश शास्त्री के कथनानुसार राज्य के ब्राह्मणों के आग्रह पर निमन्त्रण वापस ले लिया गया।

दिल्ली दरबार के अवसर पर भारतवर्ष के कुछ सुधारकों की एक सभा स्वामी जी के निवासस्थान पर हुई थी। इस सभा में स्वामीजी के अतिरिक्त छः अन्य विशिष्ट व्यक्ति उपस्थित थे। उनके नाम हैं मुंशी कन्हैयालाल अलखधारी, बाबू नवीनचन्द्रराय, बाबू केशवचन्द्र सेन, मुँशी इन्द्रनारायण सरसैयद अहमद खाँ, बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि।

इस सभा में स्वामी जी का सुझाव था कि वेद के ध्वज के नीचे भारत के सब सम्प्रदाय के सुधारक एकत्रित हो सकते हैं, अतएव वेद प्रतिष्ठा के आधार पर सुधार कार्य करने से अधिक सफलता मिल सकती है। इस सुझाव का सबसे प्रबल विरोध ब्रह्मसमाज के नेता बाबू केशवचन्द्र सेन ने किया। सब एकमत नहीं हो सके।

स्वामी जी ने ३ जनवरी १८७७ (सम्वत् १९३३) को एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र रामगढ़ सीकर राज्य में जयपुर निवासी पं० कालूराम को लिखा था कि वदांत मार्ग के प्रभाव में महाराजा इन्दौर, महाराजा बड़ौदा, महाराजा कपूरथला, राजा जयकृष्णदास, ठाकुर मुकुन्दसिंह, लाला लक्ष्मीनारायण के अतिरिक्त असंख्य व्यक्ति आये हैं। दिल्ली में महाराजा डुमराओं तो कई बार स्वामी जी से मिले भी थे।

पंजाब के कई सज्जनों ने स्वामी जी को पंजाब आने का निमन्त्रण दिया। अतः दिल्ली से स्वामी जी मेरठ, सहारनपुर, लुधियाना होते हुए ६ वैशाख संवत् १९३४ को लाहौर पहुँचे। उनके स्वागत के लिए मुंशी हरसुखराय, कोहेनूर के अध्यक्ष, तथा ब्रह्मसमाज और सत् सभा के कुछ सदस्य रेल के स्टेशन पर पहुँचे थे।

लाहौर नगर में बावली साहब में स्वामी जी व्याख्यान देने लगे। यह बावली सिखों के अधीन थी। कुछ ही दिनों में सिख स्वामी जी से रुष्ट हो गये। और स्वामी जी ने अपने व्याख्यानों का क्रम रतनचन्द डाढ़ी वाले की सराय में आरम्भ कर दिया। यहाँ पर पौराणिक पण्डितों से विवाद हो गया तो स्वामी जी ने ब्रह्म समाज में व्याख्यान देने आरम्भ कर दिये। यहाँ ब्रह्म समाज के व्यक्ति भी प्रसन्न नहीं रह सके। स्वामी जी तो सब सम्प्रदायों का खण्डन करते थे। ब्रह्म समाजी किसी भी सम्प्रदाय का खण्डन सुन नहीं सकते थे। अतः ब्रह्म समाज से भी उनको निकलना पड़ा। इस समय एक डाक्टर रहीम खाँ ने अपनी कोठी में स्वामी जी को स्थान दे दिया। स्वामी जी वहाँ पर वेद प्रचार करते रहे।

यह कहा जाता है कि वहाँ पर स्वामी जी इस्लाम मत का खण्डन करने लगे तो मुसलमानों ने डाक्टर साहब पर बल डालना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरम्भ कर दिया, परन्तु डाक्टर रहीम खाँ ने स्वामी जी को अपनी कोठी का प्रयोग करने की स्वीकृति वापस नहीं ली। और स्वामी जी एक मास से अधिक काल तक इस कोठी में वेद धर्म की श्रेष्ठता पर व्याख्यान देते रहे। शंका-समाधान होता रहा। यहाँ स्वामी जी ने आर्य समाज स्थापित की और आरम्भ में गणपतराय रोड पर एक भाड़े के मकान में आर्य समाज के अधिवेशन और स्वामी जी के व्याख्यान होने लगे।

उल्लेखनीय बात यह है कि आर्य समाज की स्थापना डाक्टर रहीम खाँ की कोठी में ही हुई और पीछे ही यह भाड़े पर लिये हुए मकान में गई।

लाहौर की आर्य समाज में ब्रह्म समाज और सत् सभा के बहुत से सदस्य सम्मिलित हो गये।

स्वामी जी को लाहौर में भारी संघर्ष करना पड़ा और इस संघर्ष का परिणाम ही यह हुआ कि लाहौर की आर्य समाज बम्बई इत्यादि की आर्य समाज से अधिक स्थायी और सुदृढ़ संस्था बन गई।

पंजाब में रहते हुए स्वामी दयानन्द पंजाब के गवर्नर से भी मिले। इस भेंट का एक प्रयोजन था वेद भाष्य के लिये सरकारी सहायता प्राप्त करना और दूसरे, कालेज में संस्कृत की पाठविधि में संशोधन कराना। स्वामी जी को इन दोनों बातों में सफलता नहीं मिली। सरकारी दृष्टिकोण यूरोपियन वेद के भाष्यकारों के आधार पर बना था और स्वामी जी उसका खण्डन करते थे।

स्वामी जी लाहौर में श्याम जी कृष्ण वर्मा से मिले। उनसे बातचीत हुई। उस बातचीत का कुछ भी पता नहीं चलता।

उन दिनों श्याम जी विदेश जाने का विचार कर रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा प्रतीत होता है कि श्याम जी कृष्ण वर्मा तब भी क्रान्तिकारी विचारों के थे। स्वामी जी ने यह भेंट गुप्त रखने का आयोजन कर दिया था। श्याम जी अलीगढ़ में स्वामी जी से मिलने वाले थे, परन्तु कई कारणों से यह भेंट लाहौर में ही हुई।

दिल्ली से, सम्वत् १९३६ के कुम्भ के अवसर पर, स्वामी जी हरिद्वार जा पहुँचे। यह तीसरा कुम्भ का पर्व था जिसमें स्वामी जी सम्मिलित हुए थे। इस बार स्वामी जी ने श्रवणनाथ के बाग के पास, निर्मलों की छावनी के सामने, मूला मिस्त्री के खेतों में डेरा लगाया।

इस वार हरिद्वार के कुम्भ के अवसर पर स्वामी जी अस्वस्थ हो गये। उनको दस्त लग गये। बम्बई से थियोसोफिकल सोसायटी के कर्नल एलकाट और मैडम ब्लैवस्की का निमन्त्रण मिला था। ये लोग अमेरिका से आये थे। स्वामी जी की इच्छा तो थी, परन्तु वे अस्वस्थ होने से जा नहीं सके।

सम्वत् १९३६ में ही मुरादाबाद में स्वामी जी ने राजनीति पर व्याख्यान दिया। यह व्याख्यान मुरादाबाद के ज्वाइंट मजिस्ट्रेट मिस्टर स्पिडिंग की इच्छा से कराया गया। व्याख्यान एक हाल में टिकटों से प्रवेश पर किया गया। चुने हुए तीन सौ प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे।

इस व्याख्यान में राजा और प्रजा के सम्बन्धों की व्याख्या की गई। इस व्याख्यान की अपूर्वता पर स्पिडिंग बहुत प्रसन्न हुआ।

बरेली में स्वामी जी की विख्यात भेंट मुंशीराम जी से हुई। तब मुंशीराम जी काशी में पढ़ते थे और कालेज में छुट्टियों के कारण पिता के पास बरेली आये हुए थे। मुंशीराम नास्तिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। ईश्वर को नहीं मानते थे। पिता ने पुत्र के विचार जान स्वामी जी का भाषण सुनने के लिये भेजा। स्वामी जी ने 'ओं' पर व्याख्यान दिया। वहाँ पिता-पुत्र दोनों उपस्थित थे। पुत्र अति प्रभावित हुआ। मुंशीराम उसके बाद निरन्तर स्वामी जी के सभी व्याख्यान सुनता रहा। स्वामी जी से प्रश्नोत्तर कर वह अपनी शंकाओं का समाधान भी कराता रहा। मुंशीराम का कहना था कि स्वामी जी की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। वैसे उनका व्यक्तित्व भी अति ओजमय था। यही मुंशीराम बाद में महात्मा मुँशीराम के नाम से प्रसिद्ध हुए और कालान्तर में स्वामी श्रद्धानन्द बने।

बरेली में किसी ने उनसे कहा कि वहाँ के कलक्टर उनके खण्डन-मण्डन से रुष्ट हैं। वे चाहते हैं कि उनको यह व्यवहार छोड़ देना चाहिये। स्वामी जी डरने वाले नहीं थे। उन्होंने अगले ही दिन अपने व्याख्यान में घोषणा कर दी—लोग कहते हैं सत्य को प्रकट न करो, इससे कलक्टर क्रुद्ध होगा, कमिश्नर अप्रसन्न होगा। अरे चक्रवर्ती राजा भी क्यों न हो, हम सत्य ही कहेंगे।

थियोसोफिकल सोसायटी के नेताओं से स्वामी जी की भेंट काशी में हुई। स्वामी जी सम्वत् १९३७ के पूर्ण वर्ष संयुक्त प्रदेश के भिन्न-भिन्न स्थानों पर भ्रमण और प्रचार कार्य में लगे रहे।

सम्वत् १९३८ में स्वामी जी राजस्थान के भ्रमण पर चले गये। आगरा से वे अजमेर गये। अजमेर से रायपुर, ब्यावर, मसूदा, बनेड़ा, रूपहेली और वहाँ से उदयपुर।

स्वामी जी का सर्वत्र यह समाघोष रहा था—एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य। इसी से भारत की उन्नति सम्भव है।

उदयपुर के राजा ने स्वामी जी की बहुत मान-प्रतिष्ठा की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पुत्र के जन्मोत्सव पर १८०० रुपया दिया और विदाई में २००० रुपये परोपकारिणी सभा को दिये।

स्वामी जी उदयपुर से निम्बाहेड़ा, चित्तौड़ और फिर शाहपुरा पहुँचे। शाहपुराधीश नाहरसिंह स्वामीजी का भक्त बन गया। शाहपुरा से स्वामी जी रावराजा तेजसिंह के निमन्त्रण पर जोधपुर जा पहुंचे।

: ४ :

जोधपुर के नरेश जसवन्तसिंह स्वभाव और चरित्र के अच्छे आदमी नहीं थे। वे मद्यपान और वेश्यागमन के लिये विख्यात थे। जोधपुर जाने से पहले शाहपुराधीश ने उनको चेतावनी दी थी, परन्तु स्वामी जी कठिनाइयों से भयभीत होने वाले व्यक्ति नहीं थे। २९ मई को अजमेर से वे पाली पहुँचे। पाली से राज्य द्वारा व्यवस्थित सवारी पर वे जोधपुर को चल पड़े। मार्ग में रोपट में पड़ाव किया और ३१ मई को जोधपुर पहुँचे। राज्य की ओर से राव राजा जवानसिंह ने स्वामी जी का स्वागत किया। वहाँ उनको नजरबाग के सामने फैजुल्लाखाँ की कोठी पर ठहराया गया। वहाँ महाराज के अनुज कर्नल प्रतापसिंह और राव राजा तेजसिंह ने उनका स्वागत किया। राज्य कर्मचारी तो स्वामी जी के व्याख्यानों में आते रहे, परन्तु नरेश से भेंट नहीं हुई।

नरेश से २६ जून को भेंट हुई। नरेश स्वामी जी के निवास स्थान पर आये और दो घण्टे तक वहाँ रहे।

इसके उपरान्त स्वामी जी ने एक गुप्त पत्र जोधपुर नरेश को भेजा। इसमें उन्होंने नरेश के चरित्र और नन्ही वेश्या के विषय में लिखा था। इससे नरेश रुष्ट हो गये और वे पुनः स्वामी जी से मिलने के लिये नहीं गये।

स्वामी जी ने ८ सितम्बर को पुनः एक पत्र में गणेशपुरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

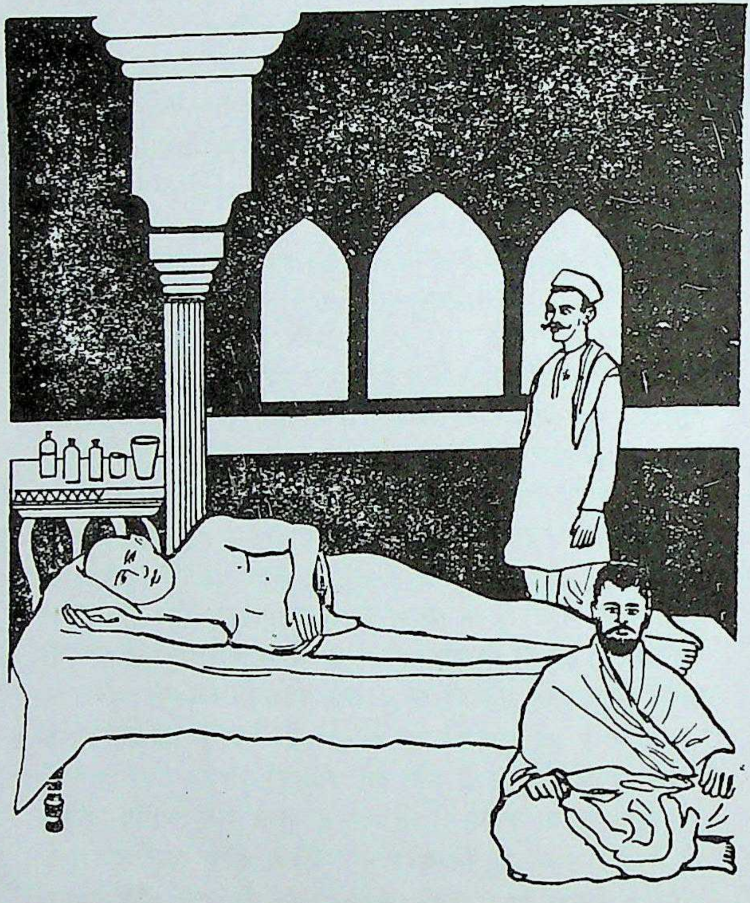

स्वामी दयानन्द मृत्यु-शैया पर—३० अक्तूबर १८८३ को दिवाली के दिन सायं ५॥ बजे स्वामी जी निर्वाण को प्राप्त हुए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से तथा वेश्या से बचने का उपदेश दिया। यह गणेशपुरी शक्ति मतानुयायी और नन्ही वेश्या का गुरु था।

इस पत्र के उपरान्त स्वामी जी के ५५० रुपये के सामान की चोरी हो गई। स्वामी जी के एक सेवक कल्लू कहार ने यह चोरी की थी। ३० सितम्बर को स्वामी जी ने वहाँ से चलने की योजना बनायी। उस दिन भारी वर्षा के कारण उन्होंने अपना आना-जाना ७-८ दिन के लिए स्थगित कर दिया। उसी रात धौल मिश्र के हाथ दूध पीकर स्वामी जी सो गये। रात को उदरशूल के कारण नींद खुली, तीन चार वमन हुए, प्रत्येक वमन के बाद स्वामी जी लेट जाते थे।

अगले दिन नींद देर से खुली। स्वामी जी को सन्देह हुआ कि विष दिया गया है। इस कारण उन्होंने गरम जल पीकर पुनः वमन किया।

धौल मिश्र पर सन्देह हुआ तो स्वामी जी ने उसको रुपये दे कर नेपाल भाग जाने की सम्मति दे दी। इसके बाद उन्होंने वमनादि उपचार करना आरम्भ कर दिया। उदरपीड़ा जारी रही। डाक्टर सूरजमल बुलाये गये। इससे पूर्व स्वामी जी अजवायन का क्वाथ पी चुके थे। इससे दस्त भी आने लगे।

सायंकाल एक अस्पताल के असिस्टेंट डाक्टर अली मर्दान खाँ को दिखाया गया। उसने महर्षि के पेट पर पट्टी बंधवाई और 'सिलवे' की गोलियाँ देनी आरम्भ कर दीं। दस्त तो आ ही रहे थे। इन गोलियों में कैलिमल था। रोग बढ़ने लगा।

ऐसा अनुमान है कि विष का प्रकोप वमन और दस्त से मिट गया था, परन्तु कैलिमल की बहुत बड़ी मात्रा देने से आंतों और यकृत में शोथ पड़ गया। डाक्टर अली मर्दान खाँ दस्त देने में सिद्धहस्त प्रतीत होते थे। उन्होंने कैलिमल के बाद 'जल्प

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाउडर कम्पाउंड' देना आरम्भ कर दिया ।

१६ अक्टूबर तक अली मर्दान खाँ की चिकित्सा चलती रही । मुँह, तालू, गला, जीभ छालों से भर गये । शूल तथा दस्त के साथ-साथ अब हिचकियाँ भी आने लगीं ।

१२ अक्टूबर तक स्वामी जी की बीमारी का समाचार जोधपुर से बाहर नहीं गया । १५ अक्टूबर को किसी प्रकार का लाभ न देख स्वामी जी को आबू भेज दिया गया । जाते समय स्वामी जी को २५०० भेंट में दिये गए और यात्रा का प्रबन्ध भी किया गया ।

आबू की चढ़ाई चढ़ते समय डाक्टर लक्ष्मण स्वरूप मार्ग में ही मिल गये । वे सरकारी नौकर थे । बदली पर अजमेर जा रहे थे । स्वामी जी की बात सुन वे वापस लौट पड़े और आबू में ५-६ दिन चिकित्सा करते रहे । चिकित्सा से लाभ भी हुआ । आगे अधिक छुट्टी न मिलने के कारण डाक्टर ने त्यागपत्र दे दिया । वह स्वीकार नहीं हुआ और उनको तार द्वारा अजमेर बुला लिया गया । डाक्टर लक्ष्मण स्वरूप के जाने पर स्वामी जी की अवस्था फिर बिगड़ी । अतः स्वामी जी को अजमेर ले जाने का विचार हो गया । १६ अक्टूबर को स्वामी जी अजमेर जा पहुँचे । वहाँ जा कर उनकी अवस्था सुधरी नहीं । उनको घोर निमोनियाँ हो गया था ।

३० अक्तूबर सन् १८८३ (सम्वत् १९४०) ११ बजे स्वामी जी का सांस रुकने लगा । इस समय स्वामी जी प्रसन्न और शान्त दिखाई देने लगे । उसी दिन, दिवाली की सायंकाल ५।। बजे स्वामी जी का प्राणान्त हो गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपसंहार

१. स्वामी दयानन्द वेदों के महान् पण्डित थे और वेदों पर अगाध श्रद्धा रखते थे। इसी कारण उनको महर्षि के नाम से स्मरण किया जाता है।

२. स्वामी जी मूलशंकर के रूप में मोक्ष प्राप्ति के लिये घर से निकले और यह सुनकर कि योगाभ्यास से मृत्यु को जीता जा सकता है, किसी योगी की खोज में भ्रमण करते रहे।

३. इस खोज में भ्रमण करते हुए आपको देश में दुर्व्यवस्था, दासता और मतमतान्तरों की मिथ्या लीला का ज्ञान हुआ। इस अनुभव पर वे देशोद्धार का मार्ग खोजने लगे। इसके लिए सत्यज्ञान की खोज आरम्भ हो गई।

४. इस खोज में वे मथुरा में स्वामी विरजानन्द दण्डी को मिले, उनको गुरु बना तीन वर्ष तक उनसे व्याकरण और शास्त्र अध्ययन करते रहे।

५. तदनन्तर अनुभव प्राप्त करने के लिए वे आगरा में दो वर्ष रहे तथा स्वाध्याय और वार्त्तालाप से अपने विचारों को परिपक्व करते रहे। फिर भ्रमण आरम्भ कर दिया। भ्रमण मरणपर्यन्त चलता रहा।

६. स्वामी जी को विष दिया गया था। इससे बच जाते, परन्तु प्रतीत ऐसा होता है कि डाक्टर अलीमर्दान खाँ अपनी मूर्खता के कारण अथवा किसी महान् षड्यन्त्र के कारण गलत पर गलत दवा देता रहा और अन्तरशोध ही मृत्यु का कारण हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

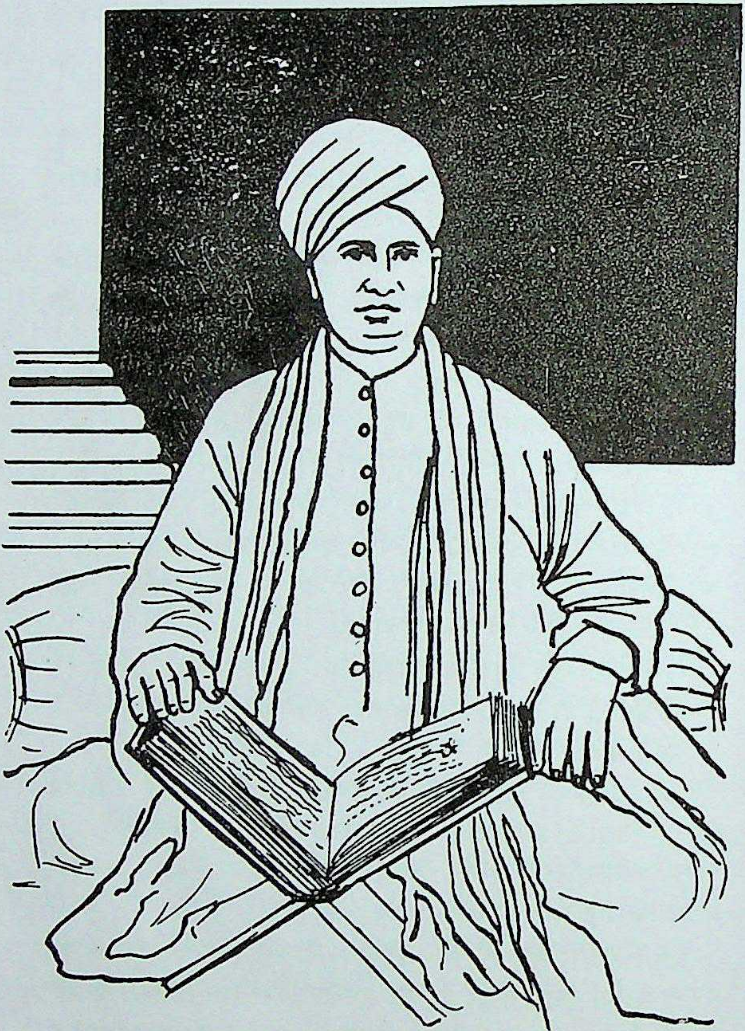

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी जी का जीवन-वृत्तान्त, वेद धर्म के उद्धार के निमित्त उनके विचारों को लिखे बिना समाप्त नहीं समझा जा सकता। इस कारण हम नीचे स्वामी जी के कुछ मन्तव्यामन्तव्य, जैसे उन्होंने अपनी 'सत्यार्थ प्रकाश' नाम की पुस्तक में लिखे हैं, संक्षेप में दे रहे हैं। वे इस प्रकार हैं :—

१. ईश्वर सच्चिदानन्द, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, अनादि, अनन्त तथा कर्त्ता है।

२. मैं चारों वेद (मन्त्र-भाग) ईश्वर प्रणीत मानता हूँ।

३. धर्म वह व्यवहार है जो वेदानुकूल, पक्षपात रहित, न्याययुक्त, सत्य एवं ईश्वराधीन है।

इसके विपरीत अधर्म वह व्यवहार है, जो वेद विरुद्ध, मिथ्या, ईश्वर की अवहेलनायुक्त, पक्षपातयुक्त और अन्याययुक्त है।

४. आत्मा को सुख, दुःख होता है तथा यह द्वेषयुक्त, अल्पज्ञ, परन्तु नित्य पदार्थ है।

५. अनादि पदार्थ तीन हैं—ईश्वर, जीव तथा प्रकृति। तीनों नित्य है और इनके गुण, कर्म, स्वभाव भी नित्य हैं।

६. जब भिन्न-भिन्न प्रकार के द्रव्य, ज्ञान एवं बुद्धि अनुसार संयुक्त होते हैं, तो सृष्टि-रचना होती है।

७. ईश्वर में सृष्टि करने का गुण है। अतः उन गुणों का सफल होना ही सृष्टि बनने में प्रयोजन है।

८. बनी वस्तु का बनाने वाला होता है। सृष्टि बनी हुई है। अतः इसके बनाने वाला कोई है। वह ईश्वर है।

९. मुक्ति से अभिप्राय है, सब दुःखों से छूट कर बन्धन रहित हो, सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना।

१०. मुक्ति प्राप्ति के साधन हैं—ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, विद्या प्राप्ति, विद्वानों का सत्संग पुरुषार्थ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. जो धर्मयुक्त व्यवहार से प्राप्त होता है, वह ही अर्थ कहलाता है। अधर्मयुक्त व्यवहार से प्राप्त अनर्थ है।

१२. काम वह है जो धर्म और अर्थ से प्राप्त किया जाये।

इस प्रकार स्वामी जी ने ५१ मन्तव्यामन्तव्य प्रकाशित किये हैं। उनके मतानुसार ये सब वेदानुसार हैं।

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोरों के लिए मार्गदर्शक, रोचक, प्रकाशन

स्वामी विवेकानन्द	शिवकुमार गोयल	रु 30
अमर सेनानी सावरकर	शिवकुमार गोयल	रु 30
अमर सेनानी सावरकर	(परिवर्तित एवं संशोधित संस्करण)	रु 40
डा0 श्यामाप्रसाद मुखर्जी	शिवकुमार गोयल	रु 60
धरती है बलिदान की	शान्ता कुमार	रु 30
क्रान्तिकारी भगत सिंह	सुरेश	रु 40
झांसी की रानी	परमेश्वर प्रसाद सिंह	रु 30
महाराणा प्रताप	परमेश्वर प्रसाद	रु 30
वीर बन्दा वैरागी	रामेश्वर अशान्त	रु 30
क्रान्तिकारी आज़ाद	शंकर सुल्तानपुरी	रु 30
क्रान्तिकारी सुभाष	शंकर सुल्तानपुरी	रु 40
क्रान्तिकारी देशभक्त सिख	भरतराम भट्ट	रु 30
क्रान्तिकारी रामप्रसाद बिस्मिल	डा0 ईश्वर प्रसाद वर्मा	रु 30
शक्तिपुत्र शिवाजी	सीताराम गोयल	रु 40
देवता स्वरुप भाई परमानन्द	श्री हरिवंश	रु 10

तेजपाल सिंह धामा की सशक्त कलम से अत्यन्त रोचक उपन्यास

पृथ्वीराज चौहान एक पराजित विजेता	रु 60
अखण्ड आर्यवर्त - चन्द्रगुप्त चाणक्य कथा	रु 70
पंक से पंकज अर्थात महर्षि वालमिकी कथामृत	रु 70
अग्नि की लपटें - महारानी पद्मिनी की कथा	रु 70

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोरों के लिए ज्ञानवर्धक, रोचक, प्रकाशन

महर्षि दयानन्द	गुरुदत्त	रु 30
श्री कृष्ण	गुरुदत्त	रु 30
जगत की रचना	गुरुदत्त	रु 30
महाभारत	गुरुदत्त	रु 20
हिटलर कीं कहानी	गुरुदत्त	रु 30
श्री राम	गुरुदत्त	रु 25
हकीकत राय	गुरुदत्त	रु 25
वीर पूजा (चन्द्रशेखर आज़ाद के जीवन पर)	गुरुदत्त	रु 40
जीवन संघर्ष (क्रान्तिकारियों की गौरव गाथा)	गुणमाला सोमाणी	रु 50
पौराणिक कथाएँ	योगेन्द्र दत्त	रु 30
देवयानी तथा अन्य कथाएँ	योगेन्द्र दत्त	रु 30
सदाचार की कथाएँ	योगेन्द्र दत्त	रु 30
मानवता की कथाएँ	योगेन्द्र दत्त	रु 30
पांडवप्रिया पांचाली	सचदेव	रु 30
बोध कथाएँ	अशोक कौशिक	रु 30
धार्मिक कथाएँ	अशोक कौशिक	रु 30
शिक्षाप्रद कथए	अशोक कौशिक	रु 30
हरि सिंह नलवा	अशोक कौशिक	रु 30
अनमोल कहानिया	पूनम त्यागी	रु 50

Central Library
Gurukula Kangri Univ.
167961

081
167961

...ी साहित्य सदन
करौल बाग, नई दिल्ली-110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

LIBRARY

	Signature	Date
Access No.		
Class No.		
Cat No.		
Tag etc.		
E.A.R.		
Recomm. by.		
Data Ent. by		
Checked		

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पुस्तकालय
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
वर्ग संख्या R 089.9143 GUR-M आगत संख्या 167961

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

LIBRARY
	Signature	Date
Access No.		
Class No.		
Cat No.		
Tag etc.		
E.A.R.		
Recomm. by.		
Data Ent. by		
Checked		

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे द्वारा प्रकाशित अन्य जीवनीयाँ

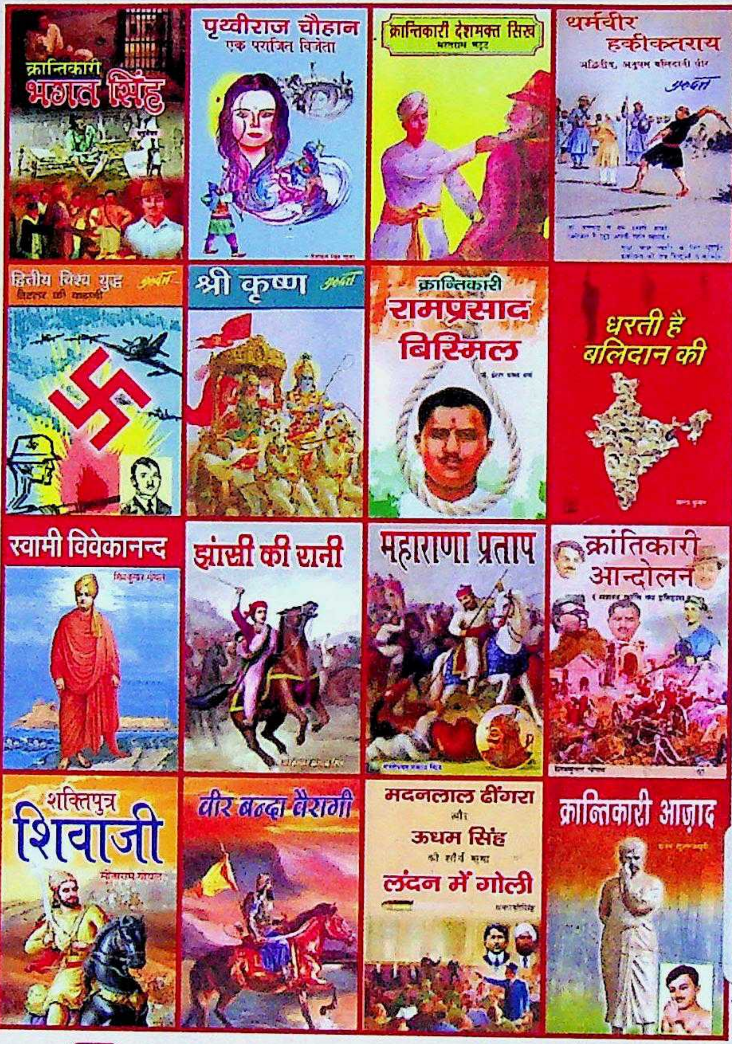

हिन्दी साहित्य सदन

2 बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 देश बंधु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली 110 005 फोन : [illegible]
www.hindisahityasadan.com

ISBN 978938633623-1
9789386336231

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar